मूल्य: ₹ १०

मई २०११

दादावाणी

बाहर क्रोध करता है और भीतर भी क्रोध तो करना ही चाहिए, उसे ऐसा होता है।

अजागृत दशा

→

बाहर क्रोध हो जाता है किन्तु जो क्रोध होता है वह उसे भीतर अच्छा नहीं लगता और उसका प्रतिक्रमण करवाता है।

जागृत दशा

→

क्रोध-मान-माया-लोभ : कषाय खड़े ही नहीं होते, निरंतर जुदापन की जागृति बरतती है।

संपूर्ण जागृत दशा

तंत्री तथा संपादक :
डिम्पल महेता
वर्ष : ६, अंक : ७
अखंड क्रमांक : ६७
मई २०११

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सीटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज,**
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : (079) 39830100
e-mail :
dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org

Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Owned by
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Printed at
Amba Offset
Basement, Parshvanath
Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Published at
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Editor : Dimple Mehta

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
१५ साल का
भारत : ८०० रुपये
यु.एस.ए. : १५० डॉलर
यु.के. : १०० पाउन्ड
वार्षिक
भारत : १०० रुपये
यु.एस.ए. : १५ डॉलर
यु.के. : १० पाउन्ड
भारत में D.D./M.O. 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

क्रोध के सामने जागृति का पुरुषार्थ

संपादकीय

क्रोध आने का कारण क्या है? प्रकृति के गुण में तन्मय होने से क्रोध आता है। मन में विचार आया और भीतर आत्मा (व्यवहार आत्मा) तन्मयाकार हो जाता है, और क्रोध उत्पन्न हो जाता है। क्रोध का स्वभाव कैसा होता है? हिंसकभाव सहित होता है और भीतर *तांता* होता है। महात्माओं में अब आत्मज्ञान प्राप्त होने के बाद हिंसकभाव या *तांता* नहीं रहता, इसलिए वास्तव में वह क्रोध नहीं कहलाता, क्योंकि उसमें से जीव भाग अब आत्मा में बैठ गया होता है। अब ज्ञान प्राप्ति के बाद अजीव पद में आ गए। इसलिए अजीव भाग के क्रोध परिणाम भीतर जलन उत्पन्न नहीं करते।

ज्ञान मिलने के बाद क्रोध-मान-माया-लोभ, अहंकार डिस्चार्ज रूप में रहते हैं। डिस्चार्ज यानी, जिस भाव से पूरण हुआ था उस भाव से गलन होता है। जिन भावों से प्रकृति लपेटी होती है उन्हीं भावों से प्रकृति खुलती है। प्रकृति जैसे नचाती है वैसे खुद नाचता है, तब उसे अपने हिताहित का ख़्याल नहीं रहता। संयोग के दबाव के कारण, समझ में नहीं आने के कारण, खुद का व्यक्तित्व छोड़ने के कारण, दख़ल होने से फिर बखेड़ा उत्पन्न हो जाता है। खुद की जगह छोड़ने से क्या नुकसान होता है? खुद का सुख आवृत्त हो जाता है। मतलब भीतर जो स्वयं सुख उत्पन्न होना चाहिए उस सुख का अनुभव नहीं होता।

उस समय ज्ञान जागृति का पुरुषार्थ कैसा होना चाहिए? हमें क्रोध परिणाम उत्पन्न नहीं हों वही उत्तम है, किन्तु यदि उदयाधीन क्रोध हो जाए तो उस परिणाम में 'हमें' चंदूभाई होकर तन्मय नहीं हो जाना चाहिए। क्योंकि चंदूभाई तो रिलेटिव स्वरूप है। इसलिए 'हमें' उस रूप नहीं हो जाना चाहिए। रियल में हम आत्मा हैं और आत्मा अक्रिय स्वभाव का है, ज्ञाता-दृष्टा-परमानंदी है, उस स्वरूप में रहने का पुरुषार्थ होना चाहिए न?

चंदूभाई, वह पूरी ही इफेक्ट है और उस इफेक्ट को बदल नहीं सकते। किन्तु इफेक्ट में इफेक्टिव हो जाना, वहाँ भूल हो जाती है। इफेक्ट को सिर्फ देखना-जानना है। वहाँ पर यदि इफेक्ट में तन्मय हो जाएँ तो समझ के साथ वापस लौटने का पुरुषार्थ प्रारंभ करना, वो ही अपना काम है।

परम पूज्य दादा भगवान कहते हैं कि प्रकृति को सुधारने की झँझट करने के बजाय भीतर का सुधारो। हमें प्रकृति से अलग होकर अपना भाग अलग से अदा करना है। प्रकृति के अभिप्राय से अलग हो जाना है। प्रकृति में तन्मय नहीं हो और प्रकृति से विरुद्ध खुद का अभिप्राय खड़ा हो जाए, वो संयमी कहलाता है। संयम परिणाम से, अलग रहने की शक्ति बढ़ती जाती है। जब डिस्चार्ज हिंसकभाव खत्म हो जाएगा तब सारी शक्तियाँ ओपन (खुली) होंगी और तब ही सही मानों में खुद का कल्याण होता है, और दूसरों के कल्याण के लिए निमित्त बनने की शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं।

अपना ध्येय ऐसा होना चाहिए कि अपने डिस्चार्ज क्रोध-मान-माया-लोभ से दूसरों को किंचित् मात्र दु:ख न हो। वे डिस्चार्ज क्रोध-मान-माया-लोभ ऐसे हो जाएँ कि उन्हें हम मोड सकें, और इससे भी आगे जागृतिपूर्वक का पुरुषार्थ आरंभ करके, कषाय रहित दशा तक पहुँच सकें।

प्रस्तुत संकलन सभी महात्माओं को मोक्ष के ध्येय की प्राप्ति के लिए जागृतिपूर्वक का पुरुषार्थ आरंभ करने में सहायक बनेगा यही अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद....

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेजी शब्द का अर्थ है अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। पाठक जहाँ पर भी चंदुभाई नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर कोई बात आप समझ न पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधार कर समाधान प्राप्त करें। भाषांतर में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी हैं।

क्रोध के सामने जागृति का पुरुषार्थ

ज़रूरत, सच्ची समझ की ही

प्रश्नकर्ता : अभी आपने गुस्से के बारे में जो बात की न, ये भाई (व्यक्ति) के साथ जो बात की न आपने, वह बात ठीक से मेरी समझ में नहीं आई।

दादाश्री : कौन-सी बात?

प्रश्नकर्ता : क्रोध और *तांता,* हिंसकभाव के बारे में...

दादाश्री : नहीं, वह आपको किस तरह समझ में आएगी? ये भाई उत्तर की ओर मुँह करके बैठे हुए हैं, और आप दक्षिण की ओर मुँह करके बैठे हो। आपकी दिशा की वो बात ही नहीं है। इसलिए आपकी समझ में कैसे आएगी? ये बात उत्तर दिशा की है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि मुझमें और उनमें बहुत फर्क़ नहीं है।

दादाश्री : ऐसा लगता है। लेकिन नियमानुसार दूसरे लोग तो ना कहेंगे न! क्योंकि यहाँ (अक्रम मार्ग में), अहंकार से क्रोध नहीं होता है, वह जो क्रोध करते हैं न, उस घड़ी हिंसा नाम मात्र को भी नहीं है, और आपके (ज्ञान नहीं लिए हुए लोगों के) क्रोध में हिंसा होती है।

प्रश्नकर्ता : गुस्सा और क्रोध, इनके बीच का भेद समझ में नहीं आया।

दादाश्री : गुस्सा इन सभी महात्माओं को आता है। फिर भी मैं कहता हूँ कि इन में से किसीको क्रोध नहीं है। क्योंकि, गुस्सा क्रोध के रूप में कब माना जाता है कि उसके पीछे हिंसकभाव हो तो ही वो क्रोध के रूप में माना जाता है। यदि इनसे पूछूँ कि 'आपमें हिंसकभाव है?' तब वे कहें, 'नहीं, दादा।' तो मैंने कहा 'आपका क्रोध, क्रोध नहीं है, गुस्सा है।' फिर पूछूँ कि 'आपमें *तांता* है?' *तांता* मतलब, उदाहरण के तौर पर आज रात को यदि आप किसी पर गुस्सा हुए हों, तो सुबह तक वो बात आपको याद रहे, और सुबह में फिर से वही बात शुरू हो जाए। तब वे कहें, 'नहीं, वह *तांता* हमें बिल्कुल नहीं रहता।' मतलब जहाँ *तांता* नहीं है, जहाँ हिंसकभाव नहीं है, वहाँ क्रोध भी नहीं है, लोभ नहीं है, मान नहीं है, कुछ भी नहीं है।

संसारी लोगों के क्रोध में जहाँ हिंसकभाव नहीं होता ऐसी भी एक जगह होती है, वहाँ पुण्यभाव होता है। उसका फल पुण्य में मिलता है। खुद के बच्चों पर क्रोध करते हैं न, वहाँ हिंसकभाव नहीं होता। बाकी, सभी जगह क्रोध में हिंसकभाव होता ही है। लेकिन जब खुद अपने घर के व्यक्ति पर (उनके हित के लिए) क्रोध करता है न, तब उसमें हिंसकभाव नहीं होता। यह आपकी समझ में आया न? लेकिन इसका उसे पुण्यफल मिलता है। और इन्हें (ज्ञान लिया हो उन्हें) तो मुक्तिफल मिलता है। इन्हें तो ऐसा भाव आया, और मुक्ति देकर चला गया।

'क्रोध', प्रकृतिगुण में तन्मय होने से

क्रोध किसे कहते हैं? मन में विचार आया और भीतर, आत्मा (व्यवहार आत्मा) तन्मयाकार होता है और क्रोध उत्पन्न हो जाता है। और वह क्रोध हिंसक भाववाला होता है।

मतलब क्रोध किसे कहा जाता है कि जिसके पीछे हिंसकभाव होता ही है। किन्तु यहाँ तो (ज्ञान लिया है उनको) हिंसकभाव नहीं है, लेकिन अहिंसकभाव है। वह क्या है? तब कहे, वहाँ *तांता* नहीं होता। *तांता* मतलब, जिसके साथ झगड़ा हुआ हो, रात को यदि पत्नी के साथ झगड़ा हुआ हो, तो सुबह में उस बात का *तांता* होता है, दोनों नहीं भूलते। पत्नी कप-रकाबी पटककर रखती है। इसलिए फिर सेठ भी समझ जाते हैं कि ये रातवाला (गुस्सा)! ऐसा इन्हें (महात्माओं को) *तांता*-वांता नहीं होता। शब्दों से लड़ाई-झगड़ा करते हैं, परन्तु थोड़े समय के बाद कुछ भी नहीं होता, *तांता* नहीं होता। ऐसा होता है न?

प्रश्नकर्ता : होता है।

दादाश्री : ऐसा अनुभव में आता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : अच्छी बात है।

क्रोध, इट हेपन्स

पूरी दुनिया में एक भी मनुष्य ऐसा नहीं है कि जिसे गुस्सा करना अच्छा लगता हो। गुस्सा करना किसीको पसंद ही नहीं है। गुस्सा पहले खुद को जला देता है, खुद को भीतर नुकसान करता है, फिर सामनेवाले को नुकसान करता है। इसलिए ऐसा व्यापार करना किसीको अच्छा नहीं लगता। गुस्सा, हो जाता है। लोभ करना भी किसीको अच्छा नहीं लगता। किन्तु लोभ, हो जाता है। कपट, झूठ, चोरी, ये सबकुछ, हो जाता है। आप नहीं करते हो। आप सिर्फ मानते हो भ्राँति से कि 'मैंने किया।'

गुस्सा पता चल जाता है, क्योंकि हमें भीतर जलन होती है न? इसलिए अच्छा नहीं लगता, और जो आनंद होता है न वो अच्छा लगता है। फिर भी दोनों हो जाते हैं। खुद की बिसात नहीं है। शक्ति के बाहर की बात है, खुद की शक्ति खत्म हो गई है। आत्मा पर आवरण आ गया है। जैसे लोहे पर आवरण आ जाता है न, उसी तरह आत्मा पर आवरण आ गया है। इसलिए आत्मा की सारी शक्तियाँ खत्म हो गई हैं। आत्मा अनंत शक्तिवाला है, तेजोमय है, सर्व प्रकाश को प्रकाशित करनेवाला है। जगत् के तमाम जीव मात्र को इतनी शक्ति है, एक ही आत्मा में इतनी सारी शक्ति है! जानने की शक्ति। जानने-देखने की आत्मा की जो शक्तियाँ हैं, वह एक ही आत्मा में इतनी अधिक शक्तियाँ हैं! फिर भी सब आवृत्त होकर पड़ी हुई हैं। किन्तु करें क्या?

प्रश्नकर्ता : तो अब आत्मा की शक्तियों को किस तरह जानना चाहिए, यह बताइए।

दादाश्री : वो तो हमारे कहे अनुसार चलो तो जानोगे।

'स्वस्वरूप' की प्राप्ति से जाए क्रोध

प्रश्नकर्ता : क्रोध किस तरह जाएगा, दादाजी?

दादाश्री : हम जब ज्ञान देते हैं तब सबकुछ चला जाता है। लेकिन ज़्यादा कुछ समझ में नहीं आता है न। क्रोध-मान-माया-लोभ सब संपूर्ण चला जाता है। क्योंकि खुद शुद्ध हुआ, अब उसमें (क्रोध-मान-माया-लोभ) नहीं है। और अब जो कुछ है वह तो उसका डिस्चार्ज है। डिस्चार्ज मतलब भरा हुआ माल जितना है उतना निकलेगा, अब नया आना बंद हो गया। और पुराना जो है वह निकल जाएगा। और इसमें, शुद्ध में तो कुछ है ही नहीं। मतलब, अब क्या होता है, कि जब क्रोध आता है तो भीतर खुद को अच्छा नहीं लगता, और 'ये नहीं होना चाहिए' ऐसा लगता है।

प्रश्नकर्ता : यहाँ पर जो आए (ज्ञान लिया हो) उसे ही ऐसा होता है न, यहाँ पर जो नहीं आता उसे ऐसा नहीं होता न?

दादाश्री : नहीं होता। यह अलौकिक है। जब तक अलौकिक मिलता नहीं तब तक अलौकिक होता नहीं। लौकिक तो सबकुछ है ही।

प्रश्नकर्ता : अलौकिक, वह क्यों एक ही जगह तक सीमित होता है?

दादाश्री : अलौकिक मतलब, इस जगत् में लोगों ने जो कुछ जाना हुआ है वह सबकुछ गलत है। एक शब्द भी सही नहीं है। इसलिए अलौकिक कहते हैं।

हम जब ज्ञान देते हैं तब क्रोध-मान-माया-लोभ, अहंकार सबकुछ रहता है। लेकिन उसमें से जीव भाग निकल गया होता है। जीव भाग जीव में बैठ गया होता है, मतलब आत्मा में बैठ गया होता है। इसलिए फिर सिर्फ जड़ भाग ही रहा।

इस ज्ञान के बाद अब वास्तव में क्रोध नहीं आता। लेकिन सामनेवाले को ऐसा लगता है कि ये इनका क्रोध है। लेकिन इन सबको (ज्ञान नहीं लिया हो उन्हें) यह समझ में नहीं आता है न। वास्तव में क्रोध-मान-माया-लोभ होते ही नहीं हैं, हंड्रेड परसन्ट (सौ प्रतिशत) होते ही नहीं हैं।

नहीं रहता हिंसकभाव ज्ञान के बाद

हमारे महात्मा किसी पर फन उठाते तो हैं (गुस्सा होते हैं) लेकिन साथ ही वो जानते हैं कि 'इसने' (चंदूभाई ने) फन उठाया। उस घड़ी, सामनेवाले का क्रोध सच्चा होता है और इनका (महात्मा का) क्रोध सच्चा नहीं होता। इनका क्रोध नाटकीय होता है। क्योंकि भीतर 'खुद' इन्वोल्व हुआ (मिला हुआ) नहीं है न!

अब तुम्हारा गुस्सा देखकर कोई कहे कि, 'आपमें तो क्रोध गया नहीं है।' तो हमें कहना चाहिए कि 'आपकी दृष्टि से बराबर है। बात गलत नहीं है।' क्योंकि उसे जैसा दिखता है वैसा ही कहेगा न। लेकिन हमें समझ जाना चाहिए कि मेरे भीतर हिंसकभाव नहीं था, फलाँ नहीं था। मतलब दादा कहते हैं, वैसा ही है।

सच्चे क्रोध का स्वभाव कैसा होता है? तब कहे, हिंसकभाव सहित होता है। सच्चा लोभ हिंसकभाव (सहित) होता है। सच्चा कपट हिंसकभाव (सहित) होता है।

'हम' जो स्वरूप का ज्ञान देते हैं उसके बाद क्रोध-मान-माया-लोभ रहते ही नहीं। लेकिन क्या आपको उनकी पहचान नहीं कर लेनी चाहिए! क्योंकि जो निर्मल आत्मा आपको दिया है, वह कभी भी तन्मयाकार नहीं होता। फिर भी, खुद की समझ में नहीं आने के कारण, खुद का व्यक्तित्व (आत्मस्वभाव) छोड़ देने के कारण, थोड़ी दख़ल होने से *डखा* उत्पन्न हो जाता है। 'खुद की जगह' छोड़ने से ही *डखा* खड़ा होता है। 'खुद की जगह' नहीं छोड़नी चाहिए। 'खुद की जगह' छोड़ने से नुकसान इतना है कि 'खुद का सुख' आवृत्त होता है और *डखा* जैसा लगता है। लेकिन 'हमारा' दिया हुआ आत्मा ज़रा-सा भी इधर-उधर होता नहीं, वह तो वैसे का वैसा ही रहता है, प्रतीति के रूप में!

ये 'ज्ञान' देने के बाद *तंत* गया। *तांता* को ही क्रोध-मान-माया-लोभ कहते हैं। जिसका *तांता* गया उसका क्रोध-मान-माया-लोभ, सबकुछ ही गया!

अब यदि आपको गुस्सा आए, चंदूभाई को गुस्सा आए, तो क्या आप ऐसा कहते हो कि 'मुझे क्रोध आता है'? आप तो ऐसा कहते हो कि 'चंदूभाई को गुस्सा आता है'। हिंसकभाव कब होता है? आत्मा मन में तन्मयाकार होता है तब हिंसकभाव होता है। इसमें (ज्ञान के बाद) तो आत्मा तन्मयाकार नहीं रहता। अलग ही रहता है, बल्कि वो तो ऐसा कहते हैं कि, 'अरे, ऐसा नहीं होना चाहिए। ऐसा नहीं होना चाहिए।' एक तरफ़ चंदूभाई गुस्सा भी करते हैं और दूसरी तरफ़ भीतर कहते हैं कि, 'ऐसा नहीं होना चाहिए।' 'नहीं होना चाहिए', इसका मतलब क्या हुआ? हिंसकभाव उड़ गया। मतलब क्रोध-मान-माया-लोभ, कुछ होता ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान के बाद गुस्सा कम हो गया है, ऐसा अनुभव में आता है।

दादाश्री : गुस्सा कम होता जाएगा और फिर चला जाएगा। यदि मेरे कहे अनुसार सब होगा न, तो सबकुछ चला जाएगा।

समझ-समझ करना

प्रश्नकर्ता : तो फिर दादा, जब गुस्सा आता है तब लोगों का ऐसा स्टेटमेन्ट होता है कि 'दादा का ज्ञान लेने के बाद गुस्सा क्यों करते हो?'

दादाश्री : ऐसा है न, हम में क्या भूल है और क्या नहीं, इसे चर्चा का विषय रखना चाहिए हमें। इसमें और कुछ करना नहीं है। सिर्फ समझने से ही चला जाएगा। समझना ही है। यह मैं जो बोलता हूँ न, उसे समझना है। वह फिर फ़िट हो जाएगा। आप आत्मा हो गए हो वह वहाँ पर बैठे हुए, मैं जानता हूँ।

क्रोध गया, परिणाम रहे

आपको क्रोध करते हुए हम सुनते हैं, देखते हैं, फिर भी हम ऐसा जानते हैं कि यह क्रोध नहीं है। क्योंकि, चंदूभाई किसी पर क्रोध करेंगे और भीतर 'आप' कहोगे कि 'नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए।' मतलब आपका क्रोध में तन्मयाकार होकर जो हिंसकभाव था वह टूट गया। यानी क्रोध गया। अब यह तो क्रोध का परिणाम है। और दूसरा व्यक्ति (जिसने ज्ञान नहीं लिया हो) वो यदि मन में अकुलाता रहता हो, कुछ बोलता नहीं हो, तो भी उसे हम कहते हैं कि, 'किस लिए सुलगते रहते हो?' क्योंकि उसमें हिंसकभाव है। और हिंसकभाव, वह वास्तव में एक्ज़ेक्ट क्रोध है।

निकल रहा है भरा हुआ माल

चंदूभाई को गुस्सा आए तो 'आपको' मन में ऐसा होता है कि 'ऐसा नहीं होना चाहिए।' किस कारण से ऐसा होता है? तब कहे, आत्मा अलग पड़ गया है। मतलब अब आत्मा अपने स्वभाव में रहता है। आउट ऑफ क्रोध रहता है। तो फिर, ये जो क्रोध आता है वो क्या है? तब कहे, 'इसमें (चंदूभाई में) जो भरा हुआ माल था, वह निकल रहा है।' ज़्यादा गुस्सा भरा हो, तो ज़्यादा निकलता है। कम गुस्सा निकले, मतलब कम भरा हुआ है। ठंडा गुस्सा भरा हुआ हो, तो ठंडा निकलता है। जैसा भरा हुआ हो न, वह माल निकलता है। ऐसे ही इस जगत् के लोगों का भी भरा हुआ माल ही निकलता है। लेकिन अज्ञानता होने के कारण खुद तन्मयाकार हो जाता है। अंहकार और बुद्धि दोनों उसमें मिलें और 'खुद' तन्मयाकार हुआ उसे क्रोध कहते हैं और 'खुद' तन्मयाकार नहीं होता तब वह क्रोध नहीं कहलाता।

जैसे भाव वैसे परिणाम

प्रश्नकर्ता : गुस्सा आना, वह प्रकृति करती है न?

दादाश्री : जो दिखता है वह गुस्सा नहीं है। मैं उसके (प्रकृति के) मूल बीज पर जाता हूँ। उसके स्टार्टिंग पोइन्ट क्या हैं? मतलब, स्टार्टिंग पोइन्ट में 'वह' इस प्रकृति पर गुस्सा होकर गुस्से में दख़ल करता है, और उससे जो प्रकृति तैयार होती है, जिस प्रकार के भावों से वो दख़ल करता है, उसी प्रकार के भावों से ही मूल प्रकृति तैयार (चार्ज) होती है। फिर वह प्रकृति उसके स्वभाव से ही डिस्चार्ज होती है। उस समय उसे (चंदूभाई को) पसंद नहीं आता, अब उसमें प्रकृति क्या करे बेचारी? मतलब जब तक खुद की समझ में भूल हो तब तक प्रकृति दुःख देगी, वर्ना प्रकृति खुद दुःख देने के लिए या सुख देने के लिए आई नहीं है।

छूटते समय प्रकृति स्वतंत्र

प्रश्नकर्ता : अब यदि प्रकृति को कोई कार्य करना हो तो आत्मा की अनुमति लेनी पड़ती है न?

दादाश्री : नहीं। आत्मा (व्यवहार आत्मा) ने जो भी भाव किया है, जैसी दख़ल की है, वैसी प्रकृति आज खड़ी हुई है। किन्तु छूटते समय, यदि आत्मा को किसी ओर तरीके से छोड़ना हो तब भी प्रकृति

अपने स्वभाव से ही छूटती है। उस घड़ी 'उसे' (चंदूभाई को) अच्छा नहीं लगता। उदाहरण के तौर पर, मुझे आप पर गुस्सा आया लेकिन मुझे यह गुस्सा अच्छा नहीं लगता।

नाचता है, जैसे प्रकृति नचाए वैसे

मनुष्य का स्वभाव कैसा होता है, कि जैसी प्रकृति वैसा खुद हो जाता है।

जैसे प्रकृति नचाती है वैसे नाचता है। अपने हिताहित का ख़्याल नहीं रहता। प्रकृति गुस्सा करवाती है तब गुस्सा कर डालता है। प्रकृति जब रुलाती है तब रोता भी है। उसे शरम भी नहीं आती। अरे, खुली आँखों से रोता है। टप-टप आँसू गिरते हैं ऐसे रोता है।

प्रश्नकर्ता : प्रकृति रुलाती है या कर्म रुलाते हैं, दादा?

दादाश्री : कर्म अर्थात् ही प्रकृति। उसे मूल प्रकृति कहते हैं। यह प्रकृति ही सबकुछ चलाती है।

प्रश्नकर्ता : मतलब ऐसा कह सकते हैं कि ये सारी चीज़ें प्रकृति स्वभाव करवाता है। इच्छा नहीं हो फिर भी प्रकृति के कहे अनुसार वह करता है। प्रकृति उससे करवाती है।

दादाश्री : प्रकृति करवाती है उतना ही नहीं, लट्टू को नचाती है। ये सभी लट्टू ही हैं, टी-ओ-पी-एस। सभी नाचते हैं और प्रकृति नचाती है। फिर चाहे वो बड़े प्रधान हों या कोई और हों, वे सभी नाचते हैं और अहंकार करते हैं कि 'मैं नाचा।'

ज़रूरत, अंदर सुधारने की

जब प्रकृति सुधरती नहीं है तब कहेंगे, 'छोड़ो, जाने दो!' अरे, नहीं सुधरे तो कोई हर्ज नहीं है, तू अपना अंदर का सुधार न! फिर हमारी 'रिस्पोन्सिबिलिटि' नहीं है! ऐसा यह 'साइन्स' है! बाहर (वर्तन) में चाहे जो कुछ भी हो उसकी 'रिस्पोन्सिबिलिटि' हमारी नहीं है। इतना समझे तो हल आ जाए। आपकी समझ में आया न, मैं क्या कहना चाहता हूँ वह?

प्रश्नकर्ता : हाँ। समझ में आया।

दादाश्री : क्या समझ में आया?

प्रश्नकर्ता : सिर्फ देखना है, उसके साथ तादात्म्य नहीं हो जाना है।

दादाश्री : ऐसा नहीं। तादात्म्य हो जाए तो भी हमें तुरन्त कहना चाहिए कि, 'ऐसा नहीं होना चाहिए। ये सब गलत है!' प्रकृति तो कुछ भी करे, क्योंकि वह ग़ैरज़िम्मेदार है। लेकिन इतना आप बोलें, कि आप ज़िम्मेदारी में से छूट गए। अब इसमें कोई हर्ज आए ऐसा है?

प्रश्नकर्ता : हर्ज नहीं है, लेकिन जब क्रोध आता है उस समय भान नहीं रहता।

दादाश्री : हमारा ज्ञान ऐसा है कि भान में रखता है। प्रतिक्रमण करता है, सबकुछ करता है।

आपको भान रहता है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : रहता है, दादा।

दादाश्री : हर वक्त रहता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ। हर वक्त रहता है।

दादाश्री : हमारा ज्ञान ही ऐसा है कि निरंतर जागृति और सिर्फ जागृति में ही रखता है। और जागृति वही आत्मा है।

प्रकृति तो अभिप्राय भी रखती है और सबुकछ रखती है। लेकिन हमें अभिप्राय रहित होना है। हम अलग, प्रकृति अलग। 'दादा' ने अलग कर दिया है। फिर हमें 'अपना' भाग अलग अदा करना है। इस 'पराई पीड़ा' में उतरना नहीं है।

प्रकृति करे टेढ़ा, हम करें सीधा

प्रकृति टेढ़ा करे, लेकिन तू अंदर सीधा करना। प्रकृति यदि क्रोध करने लगे तब 'हमें' 'चंदूभाई' से

क्या कहना पड़ता है? 'चंदूभाई ये गलत हो रहा है, ऐसा नहीं होना चाहिए।' फिर 'आपका' काम पूरा हो गया! प्रकृति तो कभी उल्टी भी निकले और सुल्टी भी निकले। उसके साथ हमें लेना-देना नहीं है। भगवान क्या कहते हैं कि, 'तू तेरा बिगाड़ना नहीं।'

प्रश्नकर्ता : प्रकृति को बदलना हो तो बदल सकते हैं?

दादाश्री : प्रकृति बदलती नहीं है और जो बदलती है न, वह बदलनेवाली थी इसलिए बदलती है।

प्रश्नकर्ता : इसका मतलब ये हुआ कि प्रकृति को बदल सकते हैं।

दादाश्री : कुछ बदल नहीं सकते। यह ज्ञान मिलने के बाद समभाव से *निकाल* कर सकते हैं। प्रकृति को बदल नहीं सकते। प्रकृति बदल जाए तो फिर कल्याण ही हो जाए न! बदलनेवाला होना चाहिए न! और यदि (खुद) बदलनेवाला हुआ तो फिर हो गया। यह ज्ञान खत्म हो गया!

ज्ञान से प्रकृति बिल्कुल ढीली

प्रश्नकर्ता : किन्तु दादा, इस ज्ञान से प्रकृति नरम (ढीली) तो पड़ती है न?

दादाश्री : बिल्कुल ढीली हो जाती है। क्योंकि अब नया चार्ज नहीं होता न। आत्मा की हाज़िरी से यह सब चलता है। अब, (आत्मज्ञान के बाद) आत्मा है, उसकी हाज़िरी है, किन्तु नये चार्ज का कनेक्शन नहीं रहा!

प्रश्नकर्ता : कनेक्शन नहीं रहा इसलिए प्रकृति...

दादाश्री : ढीली हो जाती है। प्रकृति भाग अदा करती है, आत्मा की हाज़िरी के कारण, कनेक्शन नहीं रहा इसलिए नया कुछ अंदर नहीं जाता (उसे पोषण नहीं मिलता)।

प्रश्नकर्ता : नया अंदर नहीं जाता, मतलब क्या?

दादाश्री : पावर ही उड़ गया सारा। प्रकृति का पावर (ज़ोर) सारा ढीला हो गया। गुस्सा किया, लेकिन प्रकृति ने किया। अंदर से हम मना कर रहे हों कि, 'गुस्सा नहीं करना है' और प्रकृति गुस्सा कर रही हो, उसे हम गुस्सा कहते हैं। और, प्रकृति और अहंकार दोनों एक होकर करें तो उसे हम क्रोध कहते हैं। यानी, अहंकार चला नहीं जाता, वहाँ उसका पावर है। उस गुस्से में भी अहंकार चला गया नहीं है, लेकिन वहाँ उसका पावर नहीं है। बिना पावर का क्रोध किसीको जलाता नहीं, जलन नहीं देता।

प्रकृति के गुण में आत्मा (व्यवहार आत्मा) तन्मयाकार हो जाए तब क्रोध कहलाता है। अब आपमें सिर्फ प्रकृति के गुण ही रहे हैं।

बिगड़ी हुई प्रकृति के सामने

प्रकृति के दबाव से कोई व्यक्ति किसी पर उग्र हो जाता है, लेकिन तुरन्त ही उसके बाद वह किसमें होता है? कि 'ऐसा नहीं होना चाहिए' ऐसे भाव में। और जगत् के लोग तो, जो हो जाता है उस भाव में ही होते हैं। मतलब इन दोनों में बहुत फ़र्क है। आपका तो सहमत (तन्मयाकार) होकर चलता है न सबकुछ?

प्रश्नकर्ता : ऐसा होता है। लेकिन फिर आज का अभिप्राय अलग हो जाता है।

दादाश्री : कितना समय लगता है? जागृति तो तुरन्त ही घंटे-दो घंटे में आ जानी चाहिए। लेकिन माल ऐसा कचरे जैसा भरा है, कि कितनी ही बाबतों में तो पता भी नहीं चलता। तुम्हें ऐसा नहीं लगता? कितने घंटों में ऐसा ख़्याल आ जाना चाहिए कि 'ये गलत है'? दो घंटे-चार घंटे या बारह घंटों में भी ख़्याल आ जाना चाहिए कि 'ये गलत हुआ।' अभी भी कितनी ही बाबतों में ऐसा कुछ हो जाता है लेकिन आपको पता नहीं चलता। मुझे पता चल जाता है कि ये टेढ़े

चले। हमें पता चलता है या नहीं चलता? फिर भी हम जाने देते हैं। क्योंकि हम जानते हैं कि वापस राह पर आ जाएगा।

प्रकृति में तन्मयाकार नहीं हो, वह संयमी

अब क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं होते, क्योंकि वे आत्मा के गुण ही नहीं हैं। इसलिए अपने सभी महात्मा संयमी कहलाते हैं। संयमी यानी, यह प्रकृति जो कर रही है, उसके विरुद्ध खुद का अभिप्राय खड़ा हो, वह संयमी है।

प्रकृति यदि गुस्सा हो जाए, तो 'खुद' को पसंद नहीं आता। अभिप्राय अलग हो जाए कि 'ऐसा नहीं होना चाहिए', वह संयमी। *आड़ाई* (टेढ़ापन) नहीं होनी चाहिए। प्रकृति तो अपने किरदार निभाने ही वाली है। असंयमी हो तो वह प्रकृति में एकाकार होकर किरदार निभाता है और संयमी हो वह प्रकृति को अलग रखता है, अलग करते रहता है। प्रकृति में तन्मयाकार हो जाए वह भी अलग और प्रकृति जो करे, प्रकृति जो करती रहती हो उस पर अपना अभिप्राय अलग रखे वह संयमी। प्रकृति चाहे जैसी भी हो। प्रकृति में तन्मयाकार नहीं हो, वह संयमी।

देखने से ही खाली होती है

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लेने के बाद कई बार प्रकृति अपनी पकड़ नहीं छोड़ती। वह तो अपना काम कर ही लेती है।

दादाश्री : कोई हर्ज नहीं है। प्रकृति करे, उसमें हर्ज नहीं है। प्रकृति को हमें देखना है। सिर्फ देखना है। आत्मा का स्वभाव ज्ञाता-दृष्टा है। यदि आत्मा प्राप्त हुआ है तो फिर इस प्रकृति को आपको देखते रहना है। आपका अहंकार चला गया है, ममता चली गई है, तो फिर रहा क्या? क्रोध-मान-माया-लोभ बिल्कुल खड़े ही नहीं हों, उसे ज्ञान कहते हैं।

भरे हुए माल के सामने जागृति

एक व्यक्ति को आपने पचीस हज़ार रुपये दिए हों और वो यदि उल्टा बोलें तो आपको क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : एकदम से उस पर गुस्सा आ जाएगा।

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं, किन्तु उस घड़ी ज्ञान हाज़िर रहता है या चला जाता है?

प्रश्नकर्ता : अब रहता है।

दादाश्री : वो शुद्धात्मा है, और यदि चंदूभाई गुस्सा करते हैं उसे 'हमें' देखना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : हाँ, बराबर। शायद चंदूभाई गुस्सा करें भी।

दादाश्री : गुस्सा हो जाता है। क्योंकि भरा हुआ माल है न! लेकिन उसे हमें देखना चाहिए। और फिर चंदूभाई से कहना चाहिए कि 'किस लिए ऐसा करते हो! ज़रा सीधे रहो न! अनंत जन्मों से भटक रहे हो तो अब तो सीधे चलो।'

फिर यदि वह व्यक्ति कहे कि, 'चार आने भी नहीं दूँगा', तो क्या कहोगे?

प्रश्नकर्ता : तब 'भुगते उसी की भूल' ऐसा मानकर समाधान कर डालेंगे।

दादाश्री : तुरन्त ही?

प्रश्नकर्ता : हाँ। इस तरह पहले हमने लिए होंगे इसलिए आज वह नहीं देता।

दादाश्री : तो लोभ कषाय उड़ गया। लोभ कषाय गया।

प्रश्नकर्ता : वैसे यों लोभ कषाय का जाना बहुत कठिन है।

दादाश्री : कठिन है, लेकिन यदि आप अपना सयानापन बीच में नहीं लाओ तो यह ज्ञान बिल्कुल चौकस रखे ऐसा है।

यदि एक लाख रुपये लेने के बाकी हों और सामनेवाला एक आना भी नहीं दे तो भी अपने चेहरे के हावभाव बिगड़ने नहीं चाहिए। हावभाव बिगड़ गए तो खत्म हो गया!

प्रश्नकर्ता : जब दस लाख रुपये लेने हों और उसमें से दो-तीन लाख गए, फिर तो मकड़ी का एक पैर गया उसके जैसा हुआ, लेकिन दस लाख के बजाय बारह लाख का नुकसान हुआ हो तो....

दादाश्री : अरे, अठारह लाख का नुकसान हो जाए तो भी क्या?

प्रश्नकर्ता : तब (ज्ञान में) रहना चाहिए।

दादाश्री : अट्ठाईस लाख का आए तो भी क्या!

प्रश्नकर्ता : फिर तो पाँच करोड़ हों तो भी एक ही बात है न, क्योंकि उसे देने नहीं हैं न, इसलिए!

दादाश्री : हमें चंदूभाई को इतना ही कहना है कि, 'चंदूभाई, (पैसे) देने हैं, ये निश्चय तोड़ना नहीं। जब पैसे आएँगे तब देने हैं ऐसा तय रखना।' और जिसका होता है, उसे वह मिले बगैर रहता नहीं और नहीं होता तब वह (नुकसान के रूप में) मार खाता है।

प्रश्नकर्ता : बहुत बड़ी बात कही। उसका होगा तो उसे मिलेगा ही।

दादाश्री : उसे मिलेगा ही। ये तो हिसाब है। मन बिगड़ा कि सब ख़राब हुआ, मन बिगड़ता है न इसलिए ऐसा कहता है कि 'पुलिस केस करूँगा और ऐसा करूँगा, वैसा करूँगा', ऐसा करके सामनेवाले के पास से पाँच-दस हज़ार वसूल कर लेता है। किन्तु, ऐसा करके इसने ये जो गुनाह खड़ा किया उसका दंड फिर भुगतना पड़ेगा। इसलिए गुनाह करना ही नहीं। शांति से (बात को) जाने देना। मैंने तो सारी ज़िन्दगी ऐसा ही किया है।

डाँटे वह 'मैं' नहीं

प्रश्नकर्ता : मैं ऑफिस में जहाँ पर काम करता हूँ, तो वहाँ पर मुझे किसीको डाँटना पड़ता है, कुछ कहना पड़ता है, लेकिन फिर मुझे बहुत दु:ख होता है कि यों किसीको डाँटने में मुझे निमित्त क्यों बनना पड़ा?

दादाश्री : ऐसा है न, आप डाँटते नहीं हो न! 'चंदूभाई' डाँटते हैं या 'आप' डाँटते हो?

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई डाँटते हैं।

दादाश्री : तो आपको ज़िम्मेदारी लेने की ज़रूरत नहीं है। आपको तो चंदूभाई से ऐसा कहना चाहिए कि, 'भाई, ज़्यादा डाँटोगे तो आपकी क़ीमत क्या रहेगी? आपकी आबरू चली जाएगी!'

प्रश्नकर्ता : कई बार हम मनुष्य को कुदरत के सामने इतना लाचार होते हुए देखते हैं, उस समय कोई ज्ञान या कोई चीज़ काम में नहीं आती, तो वहाँ उस समय क्या करना चाहिए?

दादाश्री : अब आप शुद्धात्मा हो गए। शुद्धात्मा को लाचारी होती ही नहीं न! आपको, चंदूभाई में नहीं मिल जाना चाहिए। आप चंदूभाई हो जाते हो, उसकी ज़िम्मेदारी आती है। आपने तय किया कि वास्तव में आप कौन हो? चंदूभाई, वह तो आपका रिलेटीव स्वरूप है। इसलिए 'हमें' तो चंदूभाई में मिलना ही नहीं है।

भरा हुआ माल निकलना ही चाहिए

प्रश्नकर्ता : दादा, कोई क्रोध या कषाय का वाक़या हुआ हो, और वह अपने ध्येय को नुकसान करता हो, तो उसे हम सोच-विचारकर पूरी तरह समझ लेते हैं। तो फिर से वही गलती नहीं होनी चाहिए न?

दादाश्री : नहीं। ऐसा तो होगा ही। होना ही चाहिए। नहीं हो तो वह गलत कहलाता है। भीतर जितना माल भरा हुआ है उतनी बार होगा। नहीं भरा हुआ होगा वह नहीं होगा। तुझे तो प्रतिक्रमण करते रहने हैं। 'नहीं होनी चाहिए', इसका फिर करनेवाला कौन है? करनेवाला तो अकर्त्ता हुआ। ये तो समझ नहीं है इसलिए ऐसा बोलता है न!

प्रश्नकर्ता : दादा, ऐसा हो जाता है। इसलिए मैंने पूछा कि 'फिर से ऐसा क्यों हो जाता है?'

दादाश्री : हमने ही उल्टा और सीधा किया हुआ है इसलिए फिर क्या हो सकता है? हर एक काम में नहीं होता, अमुक काम में ही होता है।

प्रश्नकर्ता : ऐसा बोध लेने की और सार निकालने की शक्ति किस तरह खिलती है, दादा?

दादाश्री : भीतर शक्ति है ही। बोध भी लिया हुआ ही है। गलत है ऐसा जानता भी है लेकिन अटकता नहीं न? माल का जत्था ज़्यादा भरा था, इसलिए अटकता नहीं है और कम भरा हुआ हो तो अटक जाता है।

प्रश्नकर्ता : हमारा स्वरूप इतना अधिक शुद्ध होगा तब एक-दो जन्म के बाद हमारा मोक्ष होगा न?

दादाश्री : स्वरूप तो शुद्ध हो गया। अब दुकान बेचनी बाकी है (कर्मों को खत्म करना बाकी रहा है)। एक दुकानदार था, वह दुकान में माल बढ़ाता रहता था। फिर भीतर से थक गया और बहुत दुःखी हुआ। तब कहे, 'अरे, अब दुकान को निकाल देना है।' इसलिए दुकान को निकाल देने की शुरूआत की। किन्तु पूरी दुकान को कैसे निकाल दें? कोई ज्ञानी पुरुष इस जन्म में मिल जाएँ तो हो सकता है। ज्ञानी पुरुष रास्ता दिखाते हैं कि दुकान किस तरह निकाल देनी चाहिए! जो उपाय ज्ञानी पुरुष ने बताए हों, उन उपायों से समभाव से *निकाल* कर डालना है।

'इट हेपन्स' वहाँ गुस्सा क्यों?

प्रश्नकर्ता : अभी भी कई बार जब हमारा *धार्यु* (मनमानी) नहीं होता तब हमें गुस्सा आ जाता है, तो गुस्सा नहीं आए, उसके लिए हमें क्या करना चाहिए?

दादाश्री : ये जो हो रहा है, उसमें भी आपकी धारणा के अनुसार हो रहा है ऐसा जहाँ-जहाँ आपको लगता है न, वास्तव में वो भी आपकी धारणा के अनुसार हुआ नहीं है। ये तो आपके मन में ऐसी एक तरह की (मान्यता) है कि ऐसा हुआ। किन्तु वास्तव में, होता है कुछ और ही। इट हेपन्स, सब हो रहा है। उसमें, हमें जो पसंद हो ऐसा हो जाए, तो हम कहते हैं 'मैंने किया'। और हमें पसंद नहीं हो ऐसा कुछ हो जाए तो 'मैंने नहीं किया' ऐसा कहते हैं। लेकिन दोनों गलत है। इट हेपन्स, सब हो रहा है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, हमें जो गुस्सा आता है, वो गुस्सा करने की.....

दादाश्री : गुस्सा करने की ज़रूरत ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : ये जो गुस्सा आता है, वो गुस्सा नहीं आए ऐसा कुछ करो न?

दादाश्री : लेकिन तुम्हें गुस्सा नहीं आए ऐसा ही करके दिया है। अब तुम्हें गुस्सा नहीं आएगा। और तू अभी भी कहता है कि, 'गुस्सा आता है।'

आप कौन हो? शुद्धात्मा हो। मतलब, चंदूभाई को गुस्सा आए तब 'आप' अंदर क्या करते हो, कि 'ऐसा नहीं होना चाहिए।' ऐसा होता है या नहीं होता? चंदूभाई को गुस्सा आए और 'आप' भीतर एकाकार हो जाओ उसे क्रोध कहते हैं। आप तो भीतर मना करते हो और चंदूभाई को गुस्सा आता है। ये सिर्फ डिस्चार्ज है। आपकी इच्छा नहीं है। ऐसा होता है न भीतर कि 'नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए।' इसलिए ये जो डिस्चार्ज गुस्सा हो जाए उसका आपको हर्ज नहीं रखना है। उसमें हर्ज नहीं है। अब (वास्तव में) सच्चे क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं रहे हैं। पहले जब तन्मयाकार होकर करते थे तब वे सब थे।

इन लोगों को (महात्माओं को) जो क्रोध-मान-माया-लोभ होते हैं, आप सभी को होते हैं, वह 'इफेक्ट' है, 'कॉज़' नहीं है। इसलिए हम कहते हैं कि क्रोध-मान-माया-लोभ भी नहीं हैं। क्योंकि, 'कॉज़' हो तो ही क्रोध-मान-माया-लोभ कहा जाता है।

अब आपमें से क्रोध-मान-माया-लोभ सब

चले गए। आपमें कुछ रहा ही नहीं। आप शुद्ध हो गए हो। अब चंदूभाई में जो भरा हुआ माल है, वह अब डिस्चार्ज के रूप में निकलता रहेगा। अब नया माल चार्ज होना बंद हो गया। मतलब जो भरा हुआ है वह निकलता रहेगा। वह डिस्चार्ज माल निकलता है, उसमें क्रोध-मान-माया-लोभ जैसा आपको लगता है, लेकिन वास्तव में वह क्रोध-मान-माया-लोभ है ही नहीं! डिस्चार्ज भाव हैं। चंदूभाई लाल-पीले हो जाएँ, किसी पर गुस्सा हो जाएँ, वह डिस्चार्ज है, चार्ज नहीं है। ये विज्ञान है! विज्ञान समझने की ही ज़रूरत है। उसके बाद एक क्षण के लिए भी चिंता नहीं होती, *उपाधि* नहीं होती, ऐसा निरुपाधी विज्ञान है!

जानना है इफेक्ट को, जुदा रहकर

अब चंदूभाई को गुस्सा आए, उसे कुछ भी हो, वह व्यवस्थित के ताबे में है। अब आपको कुछ लेना-देना नहीं है। आपको तो चंदूभाई क्या करते हैं उसे देखते रहना है। कभी ज़्यादा गुस्सा करें तो कहना कि, 'चंदूभाई, ज़रा सीधे चलो न, ऐसा क्यों करते हो?' और चंदूभाई को जब डिप्रेशन आए, तब हमें आईने के सामने जाकर कंधा थपथपाना चाहिए कि, 'मैं हूँ आपके साथ, घबराना नहीं।' अब आप अलग हो गए हो। आपके सिर पर इसकी ज़िम्मेदारी नहीं है। ये तो इफेक्ट है। चंदूभाई में जो क्रोध-मान-माया-लोभ रहें हैं न, वह सारी इफेक्ट ही है। इफेक्ट को बदल नहीं सकते, कॉज़ेज़ को बदल सकते हैं। अब कॉज़ेज़ सारे उड़ गए। आप शुद्धात्मा हो गए।

खुद टेढ़ा चले तब

प्रश्नकर्ता : यह ज्ञान लेने के बाद भी क्रोध आए तो वह डिस्चार्ज ही कहलाता है?

दादाश्री : क्रोध किसे आता है, वह 'देख' लेना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : बार-बार आए तो भी डिस्चार्ज कहलाता है?

दादाश्री : सौ बार आए या पाँच सौ बार आए वह सबकुछ डिस्चार्ज ही कहलाता है न! हमें ऐसा कहना चाहिए कि, 'चंदूभाई, बहुत अकुलाते रहते हो, तो अब माफ़ी माँगो सबकी।' आप ऐसा कहते नहीं हो? भूल तो एक्ज़ेक्ट हो चुकी है।

प्रश्नकर्ता : हम उन्हें बहुत कहते हैं, चंदूभाई को, उलाहना भी बहुत देते हैं, फिर भी वो टेढ़े चलें तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : यदि टेढ़े हों, तो उन्हें 'देखते' रहना चाहिए। करना कुछ भी नहीं है। आत्मा में करने की शक्ति ही नहीं है। आत्मा अक्रिय स्वभाव का है और ज्ञाता-दृष्टा-परमानंदी है। कुछ भी करना है, तो वो पुद्‌गल को करना है। जो जड़ (मेटर) वस्तु है, उसकी ही सारी क्रिया है न।

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई टेढ़े हों और उससे दूसरों को दुःख हो जाए तो फिर क्या करना चाहिए?

दादाश्री : माफ़ी मँगवानी चाहिए। 'टेढ़े हुए, उसकी माफ़ी माँगो', कहें। ये अक्रम विज्ञान कितना सुंदर है, कि आपको कुछ भी करना नहीं है बल्कि चंदूभाई से कहना है, उलाहना देना है कि, 'आप इन पर क्यों गुस्सा हुए? ऐसा क्यों करते हो?' चंदूभाई से कहना कि, 'तेरे कहे अनुसार मैं सबकुछ करूँगा किन्तु एक घंटे के लिए तू हमारे कहे अनुसार रहना।' एक घंटा दादा की आज्ञा में रहना, और फिर चंदूभाई के कहे अनुसार करना। उसे भी फिर देखना है। ध्येय से विरुद्ध करवाते हों तो नहीं मानना चाहिए।

करना है निकाल राज़ी खुशी से

प्रश्नकर्ता : दादा का ज्ञान लेने के बाद, व्यवहार के कई जो डिस्चार्ज होते हैं वो पसंद नहीं आते, तो उन्हें किस तरह मनाना है?

दादाश्री : पसंद हों वो अपने हैं, और नहीं पसंद हों वो पराये हैं? नापसंद और पसंद, दोनों का समभाव से *निकाल* करना है और नापसंद हो उनके

लिए तो ऊपर छत पर जाकर चिल्लाना है, कि 'सब साथ मिलकर आ जाओ।' बाकी, डिस्चार्ज की तो चिंता ही नहीं करनी है।

प्रश्नकर्ता : आपने तो कहा था कि डिस्चार्ज की चिंता नहीं करनी चाहिए।

दादाश्री : डिस्चार्ज को लोग क्या कहते हैं? 'मुझे क्यों ऐसा होता है, अभी भी क्रोध हो जाता है, ऐसा होता है।' डिस्चार्ज हुआ, वो तो अच्छा हो रहा है। यदि डिस्चार्ज नहीं हो, तो उसकी झँझट होती है। हम ऐसा कहते हैं कि डिस्चार्ज हो रहा है तो उस समय आप ऊब जाते हो। तो वास्तव में तो, अपना डिस्चार्ज जल्दी से जल्दी हो जाए ऐसा रखना है, हम ऐसा कहना चाहते हैं। मतलब डिस्चार्ज हो रहा हो तब हमें तो खुश होना चाहिए कि ओहोहो! बहुत अच्छा हुआ। जल्दी निकल गया। डिस्चार्ज नहीं होता हो तो झँझट करनी चाहिए कि डिस्चार्ज नहीं हुआ, तो अब हमें कुछ करना पड़ेगा। इसलिए मैं कह रहा था कि छत पर जाकर बुलाओ, 'आओ, पधारो' कहो, इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

अर्थात् इस दुनिया में सबकुछ डिस्चार्ज है। डिस्चार्ज की भूल निकालने में कोई स्वाद नहीं आएगा। डिस्चार्ज की भूलें निकालने के कारण ही ये जगत् खड़ा रहा है। जिसे आप 'परिणाम' कहते हो, उसे जगत् 'कॉज़ेज़' कहता है और इसी वजह से जगत् उलझा हुआ है। वो कहता है 'ये आपने ही किया है' और आप कहते हो कि 'नहीं, ये परिणाम है, ये डिस्चार्ज है।' इसलिए आपको भय नहीं है। आपके डिस्चार्ज उसे कॉज़ेज़ लगते हैं और वो कहेगा, 'ऐसा वर्तन क्यों करते हो?' अरे मुआ, हमें भय नहीं लगता तो तुझे किस बात का भय लगता है? और यदि भय लगना है तो दादा को लगेगा, कि ये सारे मेरे फोलोअर्स (अनुयायी) ऐसे कैसे हैं? किन्तु मैं तो जानता हूँ कि ये भरा हुआ माल निकलता है, नया कहाँ से निकालेगा?

भरे हुए माल से अलग, हम

ये अक्रम विज्ञान है न! माल खाली नहीं किया है, भरा हुआ है। क्रोध-मान-माया-लोभ का माल तो स्टोक है। खाली नहीं किया है। खत्म नहीं किया है। क्रमिक मार्ग में तो खत्म करके आगे जाने देते हैं और यहाँ तो स्टोक भरा हुआ है। सारे गोडाउन भरे हुए हैं। तभी अक्रम में आत्मा को ही अलग कर देते हैं, कि खत्म करते-करते वो आगे बढ़े, वर्ना गोडाउन कब खत्म होंगे। ये सभी आचार्य महाराज तो खाली करते-करते आगे बढ़ते हैं, फिर भी उनके गोडाउन तो बहुत बड़े हैं। ग्रहस्थी लोगों से भी ज़्यादा बड़े हैं। ज्ञान मार्ग पर चलने से खाली होता है, खत्म होता है। (क्रमिक मार्ग में) ज्ञान मार्ग पर निरंतर, भले ही समकित नहीं हुआ हो किन्तु समकित से पहले ज्ञान मार्ग है। ज्ञान मार्ग कहाँ तक है? जब तक समकित नहीं हुआ हो तब तक ज्ञान मार्ग है। फिर समकितवाले को दर्शन मार्ग (सम्यक् दर्शन) होने के बाद चारित्र आता है। (क्रमिक में) ज्ञान-दर्शन और चारित्र और अपने यहाँ दर्शन, ज्ञान और चारित्र है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लेकर पाँच-पाँच वर्ष हो गए फिर भी अभी तक हमारा ठिकाने पर क्यों नहीं आता?

दादाश्री : अब तो ठिकाने पर आ ही गया कहलाता है। ऐसा क्या ठिकाने पर लाना है?

प्रश्नकर्ता : इन भूलों में से।

दादाश्री : भीतर चोखा होता जाता है। अभी तो माल निकलता रहेगा। जो कचरा भरा है, वो तो निकलेगा ही न? वर्ना टंकी खाली नहीं होगी न? पहले तो ऐसा जानते भी नहीं थे कि कचरा निकल रहा है। अच्छा ही निकल रहा है ऐसा समझते थे न? उसे ही संसार कहते हैं, और ये कचरा माल है ऐसा आपने जाना, वह अलग होने की निशानी है।

पूरण किया हुआ ही गलन होता है

प्रश्नकर्ता : दादाजी, मुझे ज्ञान लेकर चार-पाँच

वर्ष हो गए, किन्तु मेरे घरवालों को ऐसा लगता है कि अभी तक मेरा गुस्सा कम नहीं हुआ है।

दादाश्री : गुस्से को कम नहीं करना है। गुस्से को कम करोगे तो नुकसान होगा। कितना गुस्सा हो रहा है उसे देखते रहना है। (इस ज्ञान के बाद) क्या गुस्सा कम करने का होता है कभी? कौन करेगा अब? बताओ। आप पढ़े-लिखे, पी.एच.डी हुए हो। कर्त्ता को हटा दिया, अब गुस्सा कौन करेगा?

उस डिविझन (विभाग) को निकाल दिया है। करनेवाला पद करनेवाले का, लेकिन कर्त्तापद का डिविझन निकाल दिया है। भोक्तापद का डिविझन रखा है। भोक्ता कौन है? चंदूभाई।

कर्त्ता व्यवस्थित, तो अब गुस्से को कम करेगा कौन?

प्रश्नकर्ता : अब तो शुद्धात्मा ही करेगा न। यदि करना हो तो....

दादाश्री : नहीं। किन्तु वह (शुद्धात्मा) कर्त्ता नहीं है, वह तो ज्ञाता-दृष्टा है। देखते रहता है कि गुस्सा कितना बढ़ा? कितना कम हुआ? गुस्सा कम हो तो भी पता चलता है। बढ़े तो भी पता चलता है। वह देखता है कि आज तो ओहोहो! बहुत गुस्सा आ रहा है। चंदूभाई को तो बहुत गुस्सा आ रहा है। और फिर कम हुआ वो भी पता चलता है। ये आत्मा का काम है।

गुस्सा, वो तो पहले जो माल भरा था, पूरण किया था वो अब गलन हो रहा है। उसे यदि गलन नहीं होने दें तो अंदर रह जाएगा। टंकी में माल भरा हुआ हो, वो भरा हुआ माल निकलता रहता है और नया भरना बंद हो जाता है। इसलिए टंकी खाली हो जाती है। खाली हो जाती है न? मतलब ये पूरण किया हुआ गलन हो रहा है, उसे अब देखते रहना है।

कर्त्तापन छूटने के बाद यदि अब करने जाएँ, तो ऐसा कुछ होनेवाला नहीं है। वैसे भी किसीसे कुछ नहीं हो सका है। ये तो इट हेपन्स हो रहा है, और खुद कर्त्ता मानता है। इन तीन बेटरीयों में पावर भरा हुआ है। नया पावर भरना बंद हो गया इसलिए फिर बेटरीयाँ डिस्चार्ज हो गई। इसलिए मुक्त हो गए। और अभी से दु:खमुक्त हो गएँ हैं। अब दु:ख रहता ही नहीं। राग-द्वेष नहीं होते, वीतरागता रहती है। चंदूभाई क्या करते हैं, उसे तुम्हें 'देखते' रहना है, बस उतना ही काम!

कर्त्तापन के आधार पर खड़ा है क्रोध

प्रश्नकर्ता : कर्त्तापन का स्वभाव कैसा होता है? ज़रा उदाहरण देकर समझाइए।

दादाश्री : मनुष्य क्रोध तो अपने बच्चे पर भी करता है और बाहर दुश्मन के साथ भी करता है। किन्तु बच्चे के लिए उसके क्रोध का स्वभाव और कर्त्तापन कैसा होता है? बच्चे के हित के लिए होता है। और दुश्मन पर क्रोध खुद के हित के लिए होता है। मतलब वह बच्चे के हित के लिए क्रोध करे, तो वो क्रोध पुण्य बँधवाता है। बच्चे का भला हो, इसलिए बाप खुद को जलाता है। क्रोध मतलब जलाना। कर्त्तापन का स्वभाव चला जाए फिर सिर्फ क्रोध रहता है।

कर्त्तापन का स्वभाव चला जाए फिर भी क्रोध होता है। किन्तु वो निर्जीव वस्तु है। वो क्रोध निर्जीव है। यदि वो कर्त्तापन के साथ हो, तो ही जीवंत कहलाता है। ज्ञान के बाद आपका पूरा कर्त्तापन उड़ (चला) जाता है इसलिए क्रोध दु:खदायी नहीं होता। चींटी-मच्छर काटे (डंक मारे), तो उसे डंक मारा नहीं कहते। बिच्छू डंक मारे तो उसे डंक मारा कहा जाता है। मतलब अब चींटी-मच्छर जैसा रह गया है! बिच्छू की तरह डंक मारना चला गया। सारी अहंकार की ही गाँठें हैं, पागलपन सारा। उसे दादा उड़ा देते हैं न!

जानता है वो करता नहीं, करता है वो जानता नहीं

प्रश्नकर्ता : मतलब मूलत: तो जो कुछ भी करनेवाला है, वो सब अहंकार ही है न?

दादाश्री : वो ही कर्त्ता था। ज्ञान लेने के पहले जो था वो ही अब भी है। हम जिसे मानते थे कि यह 'मैं ही हूँ', वो ही ये है। और जो अलग हुआ, वो हम 'खुद'। ज्ञान मिला तभी से ही अलग हुए हैं, पहले नहीं थे।

प्रश्नकर्ता : पहले हम उसमें साथ ही थे (मिले हुए ही थे)।

दादाश्री : साथ ही थे, एक ही थे।

प्रश्नकर्ता : अब सिर्फ हम भीतर अलग हो गए, बाकी वो करनेवाला तो है ही।

दादाश्री : हाँ, है ही। वह तो वही का वही।

प्रश्नकर्ता : वो ही सबकुछ कर रहा है। क्रोध कर रहा है, विचार कर रहा है...

दादाश्री : वही का वही, अपने आप करता ही रहता है। उसमें कुछ फ़र्क नहीं पड़ेगा। वह करता रहता है, किन्तु जाननेवाला अलग है।

करनेवाला और जाननेवाला, दोनों में फ़र्क है। जाननेवाला सब जानता है, करनेवाला सब करता है।

प्रश्नकर्ता : और करनेवाला अहंकार बताया है न?

दादाश्री : वह अहंकार अलग है। मतलब (ज्ञान लेने के बाद) हम लोगों में करनेवाला डिस्चार्ज भाग रहता है, अहंकार यानी हमारा वास्तविक (सच्चा) अहंकार नहीं होता इसलिए हम जाननेवाले रहते हैं। मतलब जाननेवाला अलग ही है। मतलब जाननेवाला सबकुछ जानता है और करनेवाला करता है। उन दोनों का साथ में और इकट्ठे व्यापार होता है।

जाननेवाला हो तब बाकी का सबकुछ लेप्स (समाप्त) हो गया, उड़ गया। जानने में आया, मतलब सब कुछ उड़ गया।

प्रश्नकर्ता : उड़ गया यानी क्या?

दादाश्री : क्रिया, करनेवाले ने की और जाननेवाले ने जाना, तो सारी क्रिया उड़ गई।

करनेवाला और जाननेवाला दोनों एक समान नहीं जानते। करनेवाला बहुत थोड़ा जानता है और जाननेवाला सबकुछ जानता है उसके गुण-पर्याय सहित जानता है। करनेवाला बेभान होता है इसलिए थोड़ा-सा ही जानता है, कि 'ये मैंने किया' उतना ही, और कुछ नहीं। और जाननेवाला गुण-पर्याय सहित सबकुछ जानता है।

प्रश्नकर्ता : करनेवाला जानता नहीं और जाननेवाला करता नहीं, ऐसा आपने कहा न। करनेवाला बहुत थोड़ा जानता है, इस बारे में ज़रा स्पष्टिकरण करीए न!

दादाश्री : करनेवाला जानता नहीं, किन्तु इतना ही जानता है कि 'ये मैंने किया', इतना शब्दरूप से जानता है, बस। और कुछ भी नहीं जानता। और जाननेवाला सभी तरह से जानता है, क्योंकि उसे दूसरे भाव उत्पन्न नहीं होते। करनेवाले में राग-द्वेष रूपी भाव उत्पन्न होते हैं, अज्ञानी में। अपने यहाँ तो अलग ही चलता है। अपने यहाँ (ज्ञान लिया हो उन्हें) तो करनेवाला रहा ही नहीं न! जो कुछ भी होता है वो डिस्चार्ज भाव से होता है। करनेवाला नहीं रहा इसलिए बीज नहीं पड़ता न!

क्रोध : अजीव भाग में, जीव भाग में

हमने 'ज्ञान' दिया, उसके बाद आप जीवपद में आ गए। अजीव भाग के क्रोध-मान-माया-लोभ भीतर जलन खड़ी (उत्पन्न) नहीं करते। और 'ज्ञान' नहीं दिया हो, उनके क्रोध-मान-माया-लोभ जीवभाग में रहते हैं। मतलब वे जीवित क्रोध-मान-माया-लोभ तो जलन खड़ी करते हैं।

जगत् के लोगों को सजीव क्रोध है और आप लोगों को निर्जिव क्रोध है।

ये 'ज्ञान' देने के बाद जो क्रोध-मान-माया-

लोभ होते हैं, वो भाग अजीव है। पहले जो क्रोध-मान-माया-लोभ का भाग था वो जीवाजीव भाग था, मतलब मिश्र था। पुद्‌गल और चेतन, उन दोनों का मिश्रपना था। 'ज्ञान' देते हैं तब उसमें से जीवभाग खींच लेते हैं। जीवभाग को जीव में बिठा देते हैं, अर्थात् आत्मा में बिठा देते हैं। और अजीवभाग, अजीव में रखते हैं। दोनों को अलग कर देते हैं, इसलिए अब जो क्रोध-मान-माया-लोभ रहे वो सब अजीव भाग में रहे। मिश्रचेतन में से चेतन को खींच लिया इसलिए सिर्फ पुद्‌गल ही रहा। फिर उसे क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं कहते, फिर उसे नाटकीय कहा जाता है। अब वो ड्रामेटिक रहा, और उसका समभाव से *निकाल* करने को रहा।

भरा हुआ क्रोध होता है खाली

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी फाईल का *निकाल* नहीं होता और फाईल के साथ क्रोध हो जाता है।

दादाश्री : क्रोध तो होगा। भीतर भरा हुआ माल है। हमें जानना चाहिए कि चंदूभाई को क्रोध होता है, वो तो भीतर भरा हुआ है न! हमें चंदूभाई से कहना चाहिए कि, 'भाई, ऐसा क्यों करते हो?' किन्तु ये भरा हुआ माल निकल जाए तो अच्छा है। भरा हुआ माल खाली हो जाए तो हल आ जाता है। टंकी में है, वो क्रोध भरा हुआ है, फिर यदि उसे टंकी में से नहीं निकालें तो वो उल्टा बिगाड़ता है। अपने आप निकलता हो तो क्या हर्ज है? निकल जाता है, भले ही थोड़ी देर के लिए बदबू आएगी। पूरा निकल जाना चाहिए। मालूम पड़ जाता है न, तुरन्त।

प्रश्नकर्ता : तुरन्त। ऐसा हो जाए तब लगता है कि ये अपना है ही नहीं।

दादाश्री : हाँ, बस। उसे तो देखते रहना है। लोभ का भी पता चलता है। मतलब अब बिगड़ रहा नहीं है। ये तो सबकुछ दिन-ब-दिन सुधरता है। ज्ञान में सारे दोष ज़्यादा से ज़्यादा चमकते हैं।

प्रश्नकर्ता : जब फाईल आती है तो फाईल के साथ क्रोध करता है, फिर क्रोध हो जाने के बाद ख़्याल आता है कि ये गलत हो गया है।

दादाश्री : हाँ, किन्तु गलत हो गया ऐसा ख़्याल पहले आता था, ज्ञान लेने से पहले?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : हाँ, नहीं आता था, मतलब अब इसमें कोई है, वो बात तो तय हो गई न! वो ही आत्मा है। प्रज्ञाशक्ति दिखाती है। ये आत्मा की शक्ति है ऐसी। जब तक मोक्ष नहीं होता तब तक प्रज्ञाशक्ति काम करती है। वो ही आत्मा।

क्रोध, वह पुद्‌गल गुण

प्रश्नकर्ता : खुद के स्वरूप में आ जाए, तो फिर क्रोध नहीं होता, मान नहीं होता, माया नहीं होती, कुछ भी नहीं होता न?

दादाश्री : क्रोध-मान-माया-लोभ पुद्‌गल के गुण हैं।

क्रोध आत्मा का व्यतिरेक गुण है, स्वाभाविक गुण नहीं है, अन्वय गुण नहीं है। अन्वय मतलब निरंतर साथ में रहनेवाला और व्यतिरेक यानी हाज़िरी में, पुद्‌गल के प्रभाव से उत्पन्न होता है वह गुण। जैसे कि सूर्य की हाज़िरी में पत्थर गरम हो जाए तो क्या पत्थर का स्वभाव गरम है? नहीं। वह तो सूर्य की हाज़िरी से वो गुण उत्पन्न हो गया। इसलिए उसे व्यतिरेक गुण कहते हैं। वैसे ही, पुद्‌गल की हाज़िरी से आत्मा में क्रोध-लोभ इत्यादि उत्पन्न होते हैं।

आत्मा में ऐसे गुण नहीं है। मतलब जो अपने गुण नहीं है, उसे हम अपने सिर पर क्यों लें? जो बढ़ते-घटते रहते हैं वे सारे पुद्‌गल के गुण.... और जो बढ़े नहीं, घटे नहीं, मोटा नहीं, पतला नहीं, नाटा नहीं, लम्बा नहीं, वजनदार नहीं, हल्का नहीं, वे आत्मा के गुण। दूसरा सबकुछ पुद्‌गल।

यहाँ हमारे पास ज्ञान लें तो उनके लिए क्रोध-मान-माया-लोभ पुद्गल के गुण हैं और ज्ञान नहीं लिया हो उनके लिए आत्मा के गुण हैं। वास्तव में आत्मा के गुण नहीं हैं। किन्तु वह ही खुद बोलता है कि 'मैं चंदूलाल हूँ।' जो नहीं है, वो बोलता है। ऐसे ही ये गुण भी अपने नहीं हैं और सिर पर लेता है।

प्रश्नकर्ता : क्रोध-मान-माया-लोभ का पृथ्थकरण करना हो, तो विशेष परिणाम में अहम् खड़ा हुआ, फिर ये व्यतिरेक गुण खड़े होते हैं? फिर क्रोध होता है, तो क्रोध और अहम् का जोड़ (संधिस्थान) किस तरह है?

दादाश्री : वो सब पुद्गल है, किन्तु पुद्गल की चीर-फ़ाड करके क्या करना है? शुद्धात्मा के अलावा बाकी सबकुछ पुद्गल, उसकी चीर-फ़ाड करने का क्या अर्थ है? तुम्हें पुद्गल में से कुछ निकालना है? उसका अर्क निकालना है?

प्रश्नकर्ता : ये जोड़ क्या होता है?

दादाश्री : समझने जैसा आत्मा है और बाकी सबकुछ पुद्गल। उस पुद्गल में तुम्हें कुछ करना है? तो उसका स्पष्टिकरण करें, समझें। उसमें से तुम्हें पुद्गलसार बाहर निकालना है क्या? सिर्फ आत्मा का ही पूरा करना है या पुद्गल का सार भी निकालना है?

प्रश्नकर्ता : आत्मा का ही पूरा करना है।

दादाश्री : इस पुद्गल में तो भीतर जो चले गए थे (जो पुद्गल को समझने में पड़े थे) वो फिर वापस बाहर नहीं आए थे।

इफेक्ट हो, वो 'हम' नहीं

प्रश्नकर्ता : अपने यहाँ अक्रम विज्ञान में तो जो व्यतिरेक गुण आते हैं, क्रोध-मान-माया-लोभ, उनकी हमें चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। उन्हें तो क्या हमें सिर्फ देखना ही है?

दादाश्री : देखना ही है। वो तो खुद के गुणधर्म ही नहीं हैं। जड़ का भी गुणधर्म नहीं है।

प्रश्नकर्ता : किन्तु दादा, ये क्रोध-मान-माया-लोभ आते हैं, इसलिए उनका आफ्टर इफेक्ट (परिणाम के बाद) के तौर पर थोड़ा सा विषाद (दु:ख) होता रहता है।

दादाश्री : इफेक्ट किसे होती है? इफेक्टिव को होती है। हमें क्यों होगी? क्या हम इफेक्टिव हैं? नहीं, चंदूभाई इफेक्टिव हैं। उनको इफेक्ट होती है, उसे हमें देखना है। हमें उनसे कहना चाहिए कि, हम आपके साथ हैं, घबराना नहीं।

'अच्छा-बुरा', द्वंद्व को देखना

प्रश्नकर्ता : मतलब चंदूभाई को तो उसकी इफेक्ट होगी ही न? इफेक्ट होती है तो फिर प्रतिक्रमण करते हैं और ज्ञान में रहते हैं। किन्तु इफेक्ट ही नहीं हो तो फिर व्यक्ति जागृत नहीं रहता न?

दादाश्री : नहीं, नहीं। कितने ही लोगों को तो इफेक्ट होनेवाली ही नहीं है। ये सब तो तैयार हो गए हैं, ऐसा माल है। इनको किस चीज़ की इफेक्ट होगी?

प्रश्नकर्ता : किन्तु यदि वो गुस्सा करें तो बाद में असर नहीं होता?

दादाश्री : नहीं, कुछ नहीं होता। ये सब तो स्टेशन के करीब आ गए हैं। किन्तु आपको अब क्या परेशान करता है? कि जो पढ़ा हुआ है न वो फिर से भीतर याद आता रहता है। वो ज्ञेय है, उसे देखकर बाजू पर रख देना है। वो भरा हुआ माल है, इसलिए वो निकलनेवाला ही है। पूरण किया हुआ है वो निकलनेवाला है, बस। किन्तु हमें उसे देखना है। अच्छा हो या बुरा हो, दोनों द्वंद्व हैं। हम द्वंद्वातीत हो गएँ हैं।

समता, समझ से ही

प्रश्नकर्ता : गुस्सा, वो तो इफेक्ट है किन्तु समता रखे तो क्या वो कॉज़ है?

दादाश्री : नहीं, गुस्सा वह कॉज़ है। गुस्सा कॉज़ है और समता रखना भी कॉज़ है किन्तु गुस्से

का फल कड़वा मिलेगा और समता रखे तो मीठा मिलेगा। गुस्सेवाला व्यक्ति कैसे समता रख सकता है? तब कहे, जितना ज्ञान समझा है उतना वह कर सकता है। जितनी समझ होती है न उतनी वो समता रख सकता है।

तन्मयाकारपन से जोखिम

क्रोध हमेशा खुद को जलाता है और सामनेवाले को भी जला डालता है। और उग्रता तो खुद को भी नहीं जलाती और सामनेवाले को भी नहीं जलाती। मतलब मूल में तो उग्रता होती ही है। उग्रता परमाणु के गुण हैं। और उसमें अज्ञानता के कारण आत्मा तन्मयाकार हो जाता है, इसलिए क्रोध स्वरूप हो जाता है और ज्वालाएँ सुलगती हैं, जिससे खुद को जलन होती है और सामनेवाले को भी जलन होती है। 'ज्ञान' होने के पहले उसे क्रोध कहते थे अब उसे उग्रता कहते हैं। क्योंकि, इस 'ज्ञान' के बाद भीतर उग्रता होती है, किन्तु हम उसमें तन्मयाकार नहीं होते इसलिए उसे क्रोध नहीं कहते। आत्मा अलग रहता है और जहाँ आत्मा अलग, वहाँ उस क्रिया की क़ीमत ही नहीं है। जिसमें आत्मा तन्मयाकार हो उस क्रिया की ही क़ीमत है।

उसमें आत्मा मिश्रित नहीं होता

चाहे जैसे भी ख़राब परिणाम हो, फिर भी 'देखते' रहना है, डगमगाना नहीं है। क्योंकि तू कर्त्ता नहीं है। आज उसका कर्त्ता तू नहीं है।

अब ये जो क्रोध-मान-माया-लोभ होते हैं वो सामनेवाले को दिखता है, किन्तु आपको खुद को समझ में आता है कि ये तो पूरण किया हुआ था वो गलन हो रहा है। क्योंकि जहाँ *तांता* नहीं है, हिंसकभाव नहीं है, वहाँ क्रोध-मान-माया-लोभ है ही नहीं। मतलब आपके क्रोध-मान-माया-लोभ मूलत: चले गए। अब भीतर जो हैं उसके लिए भीतर एकता नहीं है। आत्मा और वो (फाइल नं-१) दोनों, मिश्रित नहीं होते तब तक उसे क्रोध नहीं कहते। उल्टा आपको ऐसा लगेगा कि 'ऐसा नहीं होना चाहिए। ऐसा क्यों होता है?' आपको ऐसा अनुभव में आएगा।

परमाणु असर अलग : कषाय अलग

ये शरीर परमाणुओं का बना हुआ है। कुछ गरम, कुछ ठंडे ऐसे तरह-तरह के परमाणु हैं। गरम परमाणु उग्रता लाते हैं।

आँठ प्रकार के परमाणु के (स्पर्श के) गुण हैं। पूर्वजन्म में जैसे भाव किए होते हैं उस भाव के उग्र परमाणु भीतर हैं, होट, एकदम होट परमाणु भीतर इकट्ठे होते हैं। संयोग इकट्ठा होते हैं, सायन्टीफीक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स आ मिलते हैं तब वे परमाणु भीतर फूटते हैं।

ये उग्र परमाणु फूटते हैं तब अज्ञान के कारण खुद भीतर तन्मयाकार हो जाता है, उसे क्रोध कहते हैं। लोभ कब होता है? किसी भी चीज़ को देखकर आसक्ति के परमाणु खड़े होते हैं और उसके भीतर आत्मा (व्यवहार आत्मा) मिश्रित हो जाए तब लोभ खड़ा होता है। किसीने नमस्कार किया तो मीठास, ठंडक लगती है और उसमें आत्मा (व्यवहार आत्मा) मिश्रित हुआ उसे मान कहते हैं। और इन सारी परमाणुओं की अवस्था में आत्मा तन्मयाकार नहीं होता और अलग रहता है तो उसे क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं कहते। उसे तो फिर सिर्फ उग्रता कहते हैं।

संसार के लोग इसे फुंफकारना कहते होंगे किन्तु इसे क्रोध कहते हैं। अपने महात्मा तन्मयाकार नहीं होते, क्योंकि आत्मा अलग रहता है।

तांता से ही जगत् खड़ा रहा है। क्रोध का *तांता,* मान का *तांता,* कपट का *तांता,* लोभ का *तांता*। *तांता* जाए तो ये कषाय मुर्दे जैसे हो जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : क्रोध में आत्मा मिश्रित होता है, ये समझ में नहीं आया।

दादाश्री : क्रोध में प्रतिष्ठित आत्मा मिश्रित होता

है, मूल आत्मा मिश्रित नहीं होता, बिलीफ़ आत्मा मिश्रित होता है। ये तो परमाणुओं का 'साइन्स' है।

विश्रसा-प्रयोगसा-मिश्रसा

इस बॉडी (शरीर) को यदि जला दें, तो उसके जो तत्व हैं, यानी उसके परमाणु मूल स्वरूप में, असलरूप में वापस आ जाते हैं, असल जैसे थे वैसे। ये (शरीर) अवस्था है। और वो (परमाणु) असल है, दरअसल है। बस इतना ही फ़र्क है।

प्रश्नकर्ता : एक मुर्दे को चिता पर रखें, उस घड़ी उसका परमाणु का जो भाग है वो ही जल जाता है न?

दादाश्री : परमाणु तो जलते ही नहीं हैं न! परमाणु इतने ज़्यादा सूक्ष्म हैं, और अग्नि स्थूल है इसलिए परमाणु को असर नहीं कर सकती। परमाणु तो इतने ज़्यादा सूक्ष्म हैं कि अपने शरीर जैसा हो जाता है, किन्तु जो भी योनि में जाते हैं, तब उतने से ही हो जाते हैं। और वह भी जब माँ और बाप के परमाणु इकट्ठे होते हैं तब इतना-सा होता है। बाद में बढ़ता रहता है। बाद में, जो परमाणु सूक्ष्म थे वो स्थूल होते रहते हैं। विकास होता है।

प्रश्नकर्ता : सूक्ष्म में से स्थूल बन गए, और फिर जो सूक्ष्म होनेवाले हैं, वो स्थूल में से सूक्ष्म होने की प्रक्रिया, तो क्या वहाँ फिर से बीज पड़ते हैं?

दादाश्री : स्थूल में से सूक्ष्म तो यहाँ हो गए। फिर सूक्ष्म में से स्थूल होंगे।

प्रश्नकर्ता : फिर?

दादाश्री : फिर वापस जो था, वही चक्र। वे सूक्ष्म परमाणु इतने ज़्यादा सूक्ष्म होते हैं कि माता की खुराक भीतर जाती रहे, तब स्थूल होते हैं। फिर इतना सा बच्चा जन्म लेता है, उसके बाद खुराक खाकर, स्थूल बढ़ता जाता है। परमाणु वही के वही, किन्तु परमाणु के अनुसार ही खुराक मिलती है। माता का दूध पीने का हिसाब तीन दिन तक का हो तो तीन दिन मिलता है, वर्ना भेड़ का दूध मिलता है। ऐसा सब प्रबंध पहले से ही हुआ होता है। एक्ज़ेक्ट प्रबंध होता है।

मन-वचन-काया इफेक्ट है। उस घड़ी भीतर राग-द्वेष करता है, क्रोध-मान-माया-लोभ करता है, वह कॉज़ेज़ है। व्यक्ति को जब क्रोध आता है तब पूरे शरीर के माध्यम से परमाणु खींचता है। उसे प्रयोगसा कहते हैं। पहले प्रयोगसा होता है। मूल में विश्रसा है। विश्रसा यानी, चोखे परमाणु हैं बाहर, गुस्सा करते ही तुरन्त वे परमाणु भीतर खींचाव में आते हैं, कुछ लोगों को नाक से, होठों से, मुँह के द्वारा खींचाव में आते हैं और कुछ लोगों को हाथ-पैर सभी जगह से खींचाव में आते हैं। जब यों काँपता है न, तब हाथ से-पैर से हर जगह से परमाणु खींचे जाते हैं। कभी यों ऐसे काँपते है न?

प्रश्नकर्ता : ऐसा होता है, क्रोध होता है तब कभी-कभी ऐसे काँपना हो जाता है।

दादाश्री : तब हर जगह से खींचे जाते हैं।

व्यक्ति जब गुस्सा होता है न, तब उसकी आँखें लाल हो जाती हैं, पैर ऐसे हिलने लगते हैं, काँपने लगता है, ऐसा सब होता है। ऐसा वह खुद नहीं करता, काँपने की उसकी इच्छा नहीं है। किन्तु ये जो परमाणु नाक से अंदर घुसते हैं, वे सारे ही नाक के द्वारा अंदर नहीं जा सकते, इसलिए दूसरी जगह से खींचे जाते हैं, ऐसे काँपकर।

प्रश्नकर्ता : बाहर के जो क्रोध के परमाणु हैं वो खींचाव में आते हैं?

दादाश्री : हाँ, पैर हिलता है और यहाँ से सारे परमाणु खींचे जाते हैं। नाक के द्वारा अंदर जाने का रास्ता ज़्यादा बड़ा नहीं है, दूसरे सब होल (छिद्र) में से भी परमाणु अंदर नहीं जा सकते। गुस्सा किया और पैर हिलने लगे मतलब सभी जगह से परमाणु अंदर जाते हैं। वे परमाणु विचित्र प्रकार के हो जाते हैं।

विश्रसा से प्रयोगसा होता है और जो प्रयोगसा हो गए हैं, वो दूसरे जन्म में मिश्रसा कहलाते हैं और मिश्रसा फल देने के लिए तैयार होते हैं। प्रयोगसा में फल नहीं देते। बहुत ही, अत्यंत सूक्ष्म परमाणु हैं।

प्रश्नकर्ता : शुद्ध परमाणु तो सब एक सरीखे हैं न?

दादाश्री : शुद्ध परमाणु में कोई फ़र्क नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : अब जब परमाणु खींचे जाते हैं तब साथ ही कुछ (परमाणु) चार्ज हो जाते होंगे न?

दादाश्री : हाँ, खींचते ही वो प्रयोगसा में गया। प्रयोग में गया मतलब सारे क्रोध के ही परमाणु हो गए।

प्रश्नकर्ता : जब वे परमाणु क्रोध के हो जाते हैं, तब उन परमाणु पर कोई प्रक्रिया होती होगी न, परमाणु में फेरबदल होने की?

दादाश्री : वे परमाणु क्रोध के हो गए इसलिए दूसरे जन्म में फिर इतना ज़्यादा ही क्रोध आता है।

प्रश्नकर्ता : अंदर जब क्रोध आया तब परमाणु खींचने में आए, उन शुद्ध परमाणु में जब कोई प्रक्रिया हुई, तब उसमें दूसरी तरह का कुछ फ़र्क आया होगा न?

दादाश्री : नहीं, क्रोध आया न तब से ही, क्रोध हुआ तभी से क्रोध का रंग चिपक जाता है। और अहंकार आया तो वहाँ पर उस प्रकार के परमाणु खींचे जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : मतलब अहंकार के सारे परमाणु अलग रहते हैं? अहंकार के परमाणु अलग और क्रोध के अलग?

दादाश्री : हाँ, सारे परमाणु अलग-अलग। वो ही फिर फल देते हैं। बाहर के परमाणु एक ही तरह के हैं।

परमाणु पूरण-गलन स्वभाव के

जो रूपी परमाणु हैं, उनका मुख्य गुण क्या है? तब कहे, पूरण-गलन का स्वभाव है। पूरण हुआ वो गलन होता रहता है, गलन हो गया हो तो वापस पूरण होता रहता है। मतलब पूरण-गलन, पूरण-गलन, पूरण-गलन होता ही रहता है। मुँह में खाना डाला, पानी पिया (पूरण हुआ) फिर संडास में, बाथरूम में (गलन हुआ)। नाक से श्वास लिया (पूरण), फिर उच्छ्वास (गलन)। ऐसे पूरण-गलन, पूरण-गलन होता ही रहता है। ऐसा नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : होता है न।

दादाश्री : ये सब रूपी परमाणु के गुण हैं।

छूटना है, समभाव से निकाल करके

इस जन्म में क्षायक समकित प्राप्त हुआ है। हमारी आज्ञा में जितना रह सकते हो उतनी समाधि रहती है। आपको तो उस आज्ञा में निरंतर रहना है, किन्तु भीतर माल भरा हुआ है वो आज्ञा में रहने नहीं देता। इसलिए हमसे बन पड़े उतना ज़्यादा प्रयत्न करना है। माल का स्वभाव कैसा है? आज्ञा में नहीं रहने देने का। माल कैसा भरा हुआ है? तब कहता है कि, इधर से मूर्च्छा के परमाणु भरे, उधर से अहंकार के परमाणु भरे, इधर से लोभ के परमाणु भरे, ये सारे जो परमाणु भरे थे न, वे परमाणु उनका समय आने पर, ढोल बजाते हैं। 'मुआ, आप क्यों ढोल बजाते हो?' तब कहे, 'हम भीतर हैं न।' इसलिए उनका समभाव से *निकाल* कर देना चाहिए।

मालिक नहीं बनो, तो कर्म छूट गए

डिस्चार्ज क्रोध-मान-माया-लोभ नोकर्म है और सच्चे क्रोध-मान-माया-लोभ होते हैं वो भावकर्म है।

प्रश्नकर्ता : दादा, भावकर्म भी पूर्व संचित के आधार पर होते हैं या पुरुषार्थ के आधार पर?

दादाश्री : भावकर्म जो बँधते हैं, वो ये आँठ (प्रकार के द्रव्य) कर्म के आधार पर हैं।

प्रश्नकर्ता : तो पुरुषार्थ कहाँ रहा?

दादाश्री : कोई पुरुषार्थ नहीं। पुरुषार्थ तो, ये

जो भावकर्म होते हैं न, उसे 'खुद' जानकर उसे समभाव में लाए, उसे पुरुषार्थ कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : समभाव में लाना भी कर्म के अधीन है न?

दादाश्री : नहीं, कर्म के अधीन नहीं, ज्ञान के अधीन है।

प्रश्नकर्ता : यदि पुरुषार्थ भाग नहीं हो, तो फिर कर्म ही सर्वशक्तिमान हो जाते हैं न?

दादाश्री : हाँ, वो बराबर है। कर्म शक्तिमान हैं वो भी पुरुषार्थ है। ये भ्राँत पुरुषार्थ है। पुरुषार्थ यानी प्रगति। प्रगति दो प्रकार से होती है। एक सच्चा पुरुषार्थ, पुरुष होने के बाद का पुरुषार्थ, उससे प्रगति होती है और दूसरा भ्राँत पुरुषार्थ, उससे भी प्रगति होती है। मतलब, पुरुषार्थ उसे प्रगति करने में मदद करता है। ज्ञान के बाद आप लोगों को भावकर्म नहीं होते। आप चाहे जो करो, तो भी भावकर्म नहीं होते। क्योंकि दादा की आज्ञा का पालन करते हो। भावकर्म यानी क्या? अच्छा करो तो भी भावकर्म, बुरा करो तो भी भावकर्म। कर्त्ता है तब तक भावकर्म है। जितना डिस्चार्ज है वो सारा नोकर्म, चार्ज होता है, वो भावकर्म।

प्रश्नकर्ता : वैसे दिखता है भावकर्म जैसा, किन्तु खुद डिस्चार्ज में मिल नहीं जाता और डिस्चार्ज होता है, इसलिए नोकर्म हो गया?

दादाश्री : इसलिए नोकर्म हो गया। बाहर के लोग (ज्ञान नहीं लिया हो) वे भीतर मिल जाते हैं इसलिए भावकर्म हो जाता है।

क्रोध इतनी सारी अग्नि कहाँ से लाया? परमाणु रूप में वो थे ही। स्थूल में हुआ, बाहर निकला इसलिए नोकर्म हो गया। भीतर जो है उसके 'आप' मालिक हो, आप जिम्मेदार हो। जो बाहर निकला उसके मालिक नहीं बनो तो कुछ भी नहीं। क्रोध-मान-माया-लोभ होते हों और आप उनके मालिक नहीं बनो तो कुछ भी नहीं।

प्रश्नकर्ता : मालिक नहीं बनना यानी क्या?

दादाश्री : मालिक नहीं बनना वो तो ज्ञान है। 'खुद कौन है' ये भान होता है न! क्रोध का मालिक किस लिए बन जाता है? अज्ञानता से, नामसझी से। खुद मालिक नहीं है, और 'मालिक हूँ' ऐसा मान लेता है। बाहर के लोग मालिक हैं। वे वास्तव में मालिक हैं। वो तो दिखता ही है न, श्रीमंत ही दिखता है न वो!

प्रश्नकर्ता : मतलब वास्तव में, मालिक वह भी मान ली हुई दशा ही है न?

दादाश्री : वो वास्तव में मालिक ही है।

प्रश्नकर्ता : किस तरह से?

दादाश्री : मान नहीं लिया हो तो चिंता और जलन नहीं होती। मालिक ही है। मतलब जिसने ज्ञान नहीं लिया हो वो मालिक ही माना जाता है। उनसे तू पूछे कि, 'कौन बोलता है?' तो कहता है, 'मैं ही बोलता हूँ न!'

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लिया हो, उन लोगों का कैसा होता है?

दादाश्री : वो मालिक नहीं बनते। गलती से मान लेता है कि 'मुझे ऐसा क्यों होता है, ऐसा क्यों होता है?' इतना ही, सिर्फ मानता है। वास्तविकता में ऐसा नहीं है।

मतलब, हमारे पास ज्ञान लेकर यदि हमारी आज्ञा में रहे, तो क्रोध-मान-माया-लोभ होते हैं फिर भी हमें छूते नहीं, कुछ भी नहीं होता, समाधि जाती नहीं।

अब निकाली राग-द्वेष

प्रश्नकर्ता : कई बार ऐसा होता है कि खुद को जिस चीज़ की तीव्र इच्छा हो, वो यदि प्राप्त नहीं हो, तो फिर उसका दिमाग़ खिसक जाता है, सब पर गुस्सा हो जाता है और ज्ञान में नहीं रह पाता। इन

सबका निकाल करके खुद ज्ञाता-दृष्टा किस तरह रह सकता है?

दादाश्री : चाहे जैसी भी परिस्थिति हो, ज्ञाता-दृष्टा रहना हो तो रह सकता है। ज्ञाता-दृष्टा रहना हो न, तो अमुक हद तक की परिस्थिति में रहा जा सकता है। बेहद हो गया हो, दबाव ज़्यादा हो तो फिर नहीं रह सकता। यदि जागृति चली गई हो तो भी ऐसा (भान) रहना चाहिए, कि 'जागृति उड़ गई है, उसे भी मैं जानता हूँ।' जाननेवाले के तौर पर ही रहना चाहिए, तो बाकी सब धूलधानी, नि:सत्त्व हो जाता है। सत्त्व निकल जाता है, सब जल जाता है।

लोगों के साथ का आपका डिलिंग कैसा होता है, वो मुझे बताओ! राग-द्वेष होते हैं? बिल्कुल भी नहीं होते?

प्रश्नकर्ता : वैसे नहीं होते हैं। मतलब ज़्यादा *चीकणी* फाईल (गाढ़ ऋणानुबंधवाले व्यक्ति) हो तो उसके साथ राग-द्वेष हो जाते हैं। किन्तु दूसरे लोगों के साथ बहुत कम हो गए हैं।

दादाश्री : हम लोगों को आत्मा प्राप्त हो गया है इसलिए राग-द्वेष नहीं होते, किन्तु डिस्चार्ज राग-द्वेष होते हैं, जो निकाली है। जो निकाली है उन्हें राग-द्वेष नहीं माना जाता। राग-द्वेष तो, जो बीज के रूप में पड़ते हैं न, उस चार्ज को राग-द्वेष कहते हैं। डिस्चार्ज राग-द्वेष तो सिर्फ गुस्सा है, और वे पुद्गल के गुण हैं। इसलिए वो कोई ज़्यादा महत्त्व की वस्तु नहीं है।

ज्ञाता-दृष्टा रहना मतलब क्या? कि चंदूभाई क्या करते हैं, उसे आप जानते रहो, चंदूभाई क्लेश करते हों और बेटे को धौल मारी तो वो भी हमें जानना है कि चंदूभाई अभी भी क्लेश करते हैं! हम चंदूभाई से कह सकते हैं कि 'किस लिए बिना मतलब के क्लेश करते हो?' हाँ, खुशी से कह सकते हैं और कभी डाँटना भी चाहिए, 'चंदूभाई, किस लिए ऐसा करते हो?', ऐसा कहना चाहिए। 'पहले से, शादी हुई तब से वैसे के वैसे हो। अब तो ज़रा सीधे हो जाओ, अब तो दादा मिल गए हैं।'

प्रश्नकर्ता : हाँ, और आपने अलग कर दिए फिर भी वो चंदूभाई उल्टा जवाब देते हैं कि 'नहीं, मैं तो ऐसा ही रहूँगा।'

दादाश्री : नहीं, अब वो नहीं बोलता, एक शब्द भी नहीं बोलता।

प्रश्नकर्ता : मतलब, 'इसने ऐसा किया, तो मैं भी ऐसा करूँगा', इस तरह का गुस्सा हो, तो वो चार्ज हो जाता है या नहीं?

दादाश्री : चंदूभाई कुछ इस तरह का गुस्सा करते हों, फिर भी हमें पसंद नहीं हो तो वो डिस्चार्ज है। आपको पसंद नहीं हो, आपको रुचि नहीं हो तो आप जोखिमदार नहीं हो।

आधार टूटा, हुए निराधार

'मैं चंदूभाई हूँ' बोलें, इसलिए आप क्रोध-मान-माया-लोभ सबके आधार रूप हो गए। अब 'मैं शुद्धात्मा हूँ' कहने से, वे सब निराधार हो गए। निराधार होने के बाद कौन रहता है? कोई भी वस्तु निराधार स्टेज (हालत) में कभी भी नहीं रह सकती, गिर ही जाती है। पहले तो, 'मुझे गुस्सा आया, मुझे ऐसा हुआ, वैसा हुआ', ऐसा करता था। अब निराधार हो गए, इसलिए वो सारा गुस्सा हमें निराश्रित जैसा लगता है। एक व्यक्ति निराश्रित हो और दूसरा व्यक्ति आश्रित हो, दोनों में फ़र्क पड़ता है। वैसे ही इसमें भी इतना ज़्यादा फ़र्क पड़ता है कि गुस्सा मुर्दे जैसा लगता है। बरकत नहीं होती उसमें। अब वो क्रोध-मान-माया-लोभ और कुछ नुकसान नहीं करते, सुख को आवृत करते हैं। भीतर जो सुख, स्वयंसुख उत्पन्न होना चाहिए, उसे नहीं आने देते।

'मैं चंदूभाई हूँ' इस प्रतिष्ठा की वजह से ये क्रोध-मान-माया-लोभ की सृष्टि खड़ी रही है। जब तक 'आप' इस प्रतिष्ठा में हो, तब तक क्रोध-मान-

माया-लोभ नहीं जाते। 'मैं चंदूभाई हूँ और इसका फादर हूँ' ऐसा सब जब तक आपके ज्ञान में था तब तक प्रतिष्ठा कहलाती है। किन्तु वो प्रतिष्ठा आपने छोड़ दी, कि 'मैं तो शुद्धात्मा और चंदूलाल वह तो मेरे पहले के सारे कर्मों का पुराना फोटो है, वही भुगतने का है। वो ही मेरा दंड है, गुनाह है। यही गुनाह भुगतने का है।' बाकी, यदि वो सही में 'मैं चंदूलाल हूँ' ऐसी प्रतिष्ठा करे तो ही वे गुनाह खड़े रहते हैं। किन्तु 'मैं' शुद्धात्मा हो गया इसलिए प्रतिष्ठा टूट गई।

क्रोध किसे हुआ ?

'आप' शुद्धात्मा (मैं) और दूसरा जो मिश्र आत्मा (*बावो*), जिसे क्रोध-मान-माया-लोभ कहते हैं वो सबकुछ *बावो* उसका 'आपको' निकाल करना है। आपका काम क्या है? मिश्र आत्मा का निकाल करना है और निश्चेतन चेतन (*मंगलदास*) जो है, वो अपने आप सहजभाव से चलता रहता है। 'आपके' हाथ में सत्ता ही नहीं है। मतलब मैं, *बावो, मंगलदास* समझ में आ गया न?

आपका (काम) कितना, *बावो* का कितना और *मंगलदास* का कितना? आँख से दिखे, कान से सुनाई दे, जीभ से चखे, नाक से गंध ले, वो सारा मंगलदास का।

प्रश्नकर्ता : मंगलदास का?

दादाश्री : डॉक्टर शरीर को काटे, काटने पर शरीर के भाग का जो पता चले वो भाग *मंगलदास*। पता नहीं चलता, अनुभव करनेवाले को ही पता चलता है, वो सारा *बावो*। अनुभव करनेवाले को क्रोध होता है। वो क्रोध *बावो* को होता है। मंगलदास को क्रोध नहीं आता।

प्रश्नकर्ता : बराबर।

दादाश्री : क्रोध-मान-माया-लोभ सबकुछ *बावो* का है। अपने लोग कहते हैं कि, 'दादा, मैं शुद्धात्मा हो गया फिर भी अब तक मुझे क्रोध आता है'। मैंने कहा, 'क्रोध *बावो* को आता है, तुम्हें नहीं आता।' इसलिए आपको *बावो* से कहना है कि, 'भाई, धीरे से काम लो, कि अपना निबेड़ा आ जाए।' क्रोध आ जाने के बाद, ज़रूर कहना।

किसी पर चिढ़ता हो तो समझ जाना और फिर वो सामनेवाले को डाँट ले उसके बाद कहना, 'ऐसा क्यों करते हो? क्या ये आपको शोभा देता है?' ऐसा कहने से दो फ़ायदे होते हैं। एक तो वो ज़रा नरम पड़ जाते हैं। क्योंकि, कोई कहनेवाला था ही नहीं इसलिए बेधड़क करते थे। और दूसरा ये फ़ायदा है कि हम प्रत्यक्ष अलग हैं, ऐसी हमारी शक्ति बढ़ती जाती है।

क्रोध, वह अजागृति का परिणाम

अब (तुम्हारी फाइन नं-१) गुस्सा होती हो, तो तुम्हें पता चलता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : उस समय तुम्हें क्या-क्या होता है?

प्रश्नकर्ता : पहले तो, तुरन्त पता चलता है कि गुस्सा आया।

दादाश्री : क्रोध आने के पहले ही पता चल जाता है?

प्रश्नकर्ता : एकदम से पटाखा फूटा, तो ऐसा किस लिए फूट गया? तो उस समय उतनी जागृति नहीं रही इसलिए एकदम से फूट गया। फिर क्या करना चाहिए? प्रतिक्रमण करने हैं।

दादाश्री : फिर?

प्रश्नकर्ता : और फिर निश्चय होता है कि 'फिर से ऐसा नहीं हो।'

दादाश्री : परिणाम क्या आएगा? ये सारी जागृति रहती है।

ऐसा हो सकता है कि एक ही वस्तु पर जागृति रहे। जैसे कि क्रोध हुआ, तो क्रोध जागृति में तो है ही। क्रोध क्यों हुआ? किन परिणामों से उत्पन्न हुआ, इसका फल क्या आएगा? ऐसे कई प्रकार की जागृति होती है। फिर क्रोध को खुद देखता भी है।

वर्ना, जब दूसरे लोगों को (जिन्होंने ज्ञान नहीं लिया हो) क्रोध होता है, उस समय अंदर अँधेरा, बाहर क्रोध हुआ तो अंदर घोर अँधेरा। जागृति ही नहीं रहती। जागृति नहीं रहती इसलिए तो क्रोध होता है।

वही शुद्ध उपयोग

प्रश्नकर्ता : क्रोध को देखा वही शुद्ध उपयोग है न?

दादाश्री : वही शुद्ध उपयोग, और क्या? क्रोध-मान-माया-लोभ को देखना, उसके जैसा शुद्ध उपयोग इस जगत् में और कोई नहीं है।

क्या होता है, उसे देखो

प्रश्नकर्ता : मतलब क्रोध आए तो भी हर्ज नहीं है और क्रोध नहीं आए तो भी हर्ज नहीं है।

दादाश्री : नहीं, ऐसा हमें नहीं बोलना चाहिए। क्या होता है उसे देखते रहो। 'किसी भी चीज़ का हर्ज नहीं है' ऐसा बोलने से क्रोध-मान-माया-लोभ भीतर नोट करते हैं कि ये अक्रमवाले तो नये प्रकार के हैं। वो नोट करके फिर हमें बदनाम करते हैं। क्या होता है उसे देखो।

फिर प्रकट होता है शील

प्रश्नकर्ता : दादा, पहले गुस्सा होता था और अब तो गुस्सा करना हो फिर भी नहीं होता, प्रयत्न करने से भी नहीं होता।

दादाश्री : किन्तु करने की ज़रूरत ही नहीं है न। आप जब गुस्सा नहीं करोगे तो आपका ताप बढ़ेगा। मैं गुस्सा नहीं करता इसलिए मेरा ताप इतना ज़्यादा लगता है कि मेरे करीब रहनेवाले सभी को बहुत ताप लगता है। और गुस्सा तो खुली कमज़ोरी है। सिर्फ ऐसे ही ताप लगता रहे ऐसा है। गुस्सा करने की ज़रूरत ही नहीं होती, उनको ताप लगता ही है, इसलिए शील उत्पन्न हुआ कहलाता है और शील उत्पन्न हुआ इसलिए फिर ताप लगता है। प्रताप उत्पन्न होता है! जहाँ क्रोध है, वहाँ अभी लिकेज है, इसलिए युजलेस (व्यर्थ) हो जाता है। और यदि ज़्यादा क्रोध हो तो वहाँ तो व्यक्ति एकदम खत्म ही हो जाता है। क्रोधित व्यक्ति तो ऐसे काँपता भी है, ये तो कितनी बड़ी कमज़ोरी कहलाती है! भगवान महावीर कैसे होंगे! सामनेवाला मारे, गालियाँ दे तो भी कुछ नहीं! हमें उनको देखकर उनके जैसा हो जाना है।

तब शक्ति उत्पन्न होती है

सही अर्थ में हम 'टेस्ट' (परीक्षा) में आए कब कहलाते हैं कि जब घर में कोई व्यक्ति हम पर उग्र हो जाए और हमें उग्रता नहीं हो। सामनेवाला उग्र हो और हमारे में भी उग्रता उत्पन्न हो तो समझना कि अभी कचाई है। सामनेवाला उग्र हो तो भी हमारे में, किसी पर गुस्से होना, किसी पर चिढ़ना, ऐसे सारे हिंसकभाव नहीं होने चाहिए। वास्तव में आप लोगों में तो ऐसा हिंसकभाव नहीं होता। ये आपके 'डिस्चार्ज' हिंसकभाव खत्म हो जाएँगे तब ये सारी शक्तियाँ 'ऑपन' होंगी (खुलेंगी)। डिस्चार्ज चोरियाँ, डिस्चार्ज अब्रह्मचर्य, ऐसे सारे डिस्चार्ज खाली होंगे तब परायों के लिए निमित्त बनने की शक्ति उत्पन्न होती है! हमारा (दादाश्री) सब खाली हो गया है, इसलिए तो हम निमित्त बने हैं। ये सब खाली हो जाए यानी आप परमात्मा ही हो गए!

आपको तो ये परमात्मा पद दिया हुआ है! आपके कर्ज़ की वजह से आपका सब उलझा हुआ रहता है। हमारा कर्ज़ पूरा हो गया है। हम परमात्मा पद भोग रहे हैं। आपका पूरा होने लगा है न?

बात तो समझने जैसी है, वर्ना एक ही बार ये ज्ञान मिलने के बाद कल्याण हो जाता है! किन्तु इस तरफ़ दिल नहीं लगा है। वर्ना यदि इस तरफ़ दिल लगा हो तो उसे एक्ज़ेक्ट भीतर लाइट हो ही जाना चाहिए।

जय सच्चिदानंद

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में अडालज त्रिमंदिर में आगामी कार्यक्रम

हिन्दी सत्संग शिविर

सत्संग शिविर : दि. १९ से २२ मई, सुबह ९-३० से १२ तथा शाम ४-३० से ७

ज्ञानविधि : दि. २० मई (शुक्र), दोपहर ४ से ७ तथा **अंबाजी यात्रा : दि. २३ मई** (सुबह से शाम तक)

दि. १३ अगस्त (शनि) सुबह ९ से ११ **रक्षाबंधन के अवसर पर दर्शन-भक्ति**

दि. २२ अगस्त (शुक्र) रात १० से १२ **जन्माष्टमी के अवसर पर विशेष भक्ति**

पर्युषण पर्व - दि. २५ अगस्त से १ सितम्बर २०११

पर्युषण के दौरान आप्तवाणी-४ गुजराती ग्रंथ के शेष रहे पृष्ठों पर सुबह-शाम वाचन और पूज्य दीपकभाई के द्वारा उस विषय पर सत्संग होगा। हिन्दी भाषी महात्माओं के लिए रेडियो सेट के द्वारा हिन्दी में भाषांतर की सुविधा उपलब्ध होगी।

दि. २ सितम्बर (शुक्र) सुबह - दर्शन का विशेष कार्यक्रम

दि. ३ सितम्बर (शनि) शाम ४-३० से ७ - प्रश्नोत्तरी सत्संग

दि. ४ सितम्बर (रवि) दोपहर ३-३० से ७ - ज्ञानविधि

चेन्नई : दि. १४-१५-१६ अगस्त - सत्संग तथा ज्ञानविधि (समय और स्थल की जानकारी अगले अंक में)

हैदराबाद : दि. १९-२०-२१ अगस्त - सत्संग तथा ज्ञानविधि (समय और स्थल की जानकारी अगले अंक में)

पूज्य नीरूमाँ को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत ✦ **'अरिहंत'** चेनल पर हर रोज़ सुबह १० से १०-३० और शाम ५ से ५-३० (गुजराती में)
✦ **'दूरदर्शन-गिरनार'** पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० और दोपहर ३-३० से ४ (गुजराती में)

USA ✦ **'TV Asia'** पर सोम से शुक्र सुबह ७-३० से ८ (गुजराती में)

UK ✦ **'विनस'** टीवी (स्काय चेनल ८०५) पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० (गुजराती में)

USA-UK ✦ **'आस्था'** (डीश टीवी चेनल 849-युके, 648-युएसए) पर हर रोज़ सुबह ८ से ८-३० (गुजराती में)

✦ **समग्र विश्व में** (भारत के अलावा) **सोनी टीवी** पर (हर रोज़) सुबह ७ से ७-३० (हिन्दी में)

पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत ✦ **'दूरदर्शन'** पर हर गुरुवार-शुक्रवार सुबह ९ से ९-३० (हिन्दी में) - **नई दृष्टि, नई राह**
✦ **'आस्था'** पर हर रोज़ रात १०-२० से १०-५० (हिन्दी में)
✦ **'अरिहंत'** चेनल पर हर रोज़ सुबह ९ से ९-३० और शाम ८-३० से ९ (गुजराती में)
✦ **'दूरदर्शन-सह्याद्रि'** पर सुबह ७-३० से ८ (सोम-मंगल) तथा और सुबह ७-१५ से ७-३० (बुध-शुक्र)
✦ **'दूरदर्शन' डीडी-गिरनार** पर हर रोज़ रात ९ से ९-३० - 'ज्ञानप्रकाश' (गुजराती में)

USA ✦ **'SAHARA ONE'** पर सोम से शुक्र, सुबह ९ से ९-३० (गुजराती में)

UK ✦ **'विनस'** टीवी (स्काय चेनल ८०५) पर हर रोज़ सुबह ७-३० से ८ (गुजराती में)

USA-UK ✦ **'आस्था'** (डीश टीवी चेनल 849-युके, 648-युएसए) पर हर रोज़ रात ९ से ९-३० (गुजराती में)

'दादावाणी' पत्रिका के वार्षिक सदस्यों के लिए सूचना

आपको आपकी दादावाणी पत्रिका की सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पत्ता कैसे चलेगा? यदि आपको मिली इस महीने की दादावाणी पत्रिका के कवर पर लगे हुए लेबल पर ग्राहक नं. के बाद # हो तो यह आपकी अन्तिम दादावाणी पत्रिका है। उदा. DHIA11250 # और यदि लेबल पर ग्राहक नं. के बाद ## हो तो अगले महीने आपकी सदस्यता समाप्त होगी। उदा. DHIA11250 ##. दादावाणी पत्रिका रिन्यु कराने के लिए पेज नं. १ पर दर्शाये गए मूल्य अनुसार मनी आर्डर या डिमान्ड ड्राफ्ट (पेयेबल अहमदाबाद) त्रिमंदिर अडालज के पत्ते पर भेजें। साथ ही अपना नाम, पूरा पत्ता (पीनकोड के साथ), फोन-मोबाइल नंबर, इ-मेइल आदि आवश्यक जानकारी अवश्य दें।

मई २०११
वर्ष-६, अंक-७
अखंड क्रमांक-६७

दादावाणी

RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. GAMC - 1500/2009-2011
Valid up to 31-12-2011
LPWP Licence No. CPMG/GJ/15/2009-2011
Valid up to 31-12-2011
Posted at AHD. P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.

आत्मजागृति वही आत्मा

आत्मजागृति वही अपना पुरुषार्थ है। इसलिए उसे इफेक्ट (परिणाम) नहीं कह सकते और वह किसी पर डिपेन्डेन्ट (आधारित) नहीं है। हम यह जो आत्मज्ञान आपको देते है और बाद में हमारी इन पांच आज्ञा में रहो तो जागृति उत्पन्न होती है। जागृति तो होती ही है लेकिन आज्ञा में नहीं रहने से ये सारा असर होता रहता है और उसी कारण जागृति चली जाती है। जब भूल होती है, उस वक्त जागृति रहती है और हमें वह चेतावनी भी देती है, वही स्वसत्ता है। किन्तु इस स्वसत्ता (आत्मा) का अनुभव अभी नहीं हो पाता है। (क्योंकि) कर्ज़ा (कर्मों का हिसाब) बेहिसाब है! कर्ज़ा चुकाए बगैर स्वसत्ता प्राप्त नहीं होती। कर्ज़ा पूरा होने के बाद स्वसत्ता उत्पन्न होती है। परसत्ता में कभी भी न जाए वही स्वसत्ता है। जागृति वही आत्मा है। संपूर्ण जागृति वही पूर्ण आत्मा। जितनी जागृति उतना आत्मा और जितनी अजागृति उतना पुद्गल।

– दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation-Owner. Printed at Amba Offset, Basement, Parshvanath Chambers, Usmanpura, Ahmedabad-380014.